प्रसार दूत

कृषि विज्ञान की अग्रणी पत्रिका

अप्रैल–जून, 2025

भाकृअनुप
ICAR

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)
कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानान्तरण केन्द्र
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली–110012

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
IARI 1905
जीवं – जीवनं कृषिः

संपादकीय

वर्ष 2025 में भारतीय कृषि एक गहरे और ऐतिहासिक परिवर्तन के दौर से गुजर रही है। यह बदलाव केवल परंपरागत खेती के तरीकों या उत्पादन की मात्रा तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें तकनीकी नवाचार, जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूलन, टिकाऊ कृषि पद्धतियाँ और नीति स्तर पर सशक्त हस्तक्षेपों का समावेश है। भारत की कृषि व्यवस्था अब केवल परंपरा और अनुभव पर आधारित नहीं रही, बल्कि यह तीव्र गति से एक आधुनिक, विज्ञान–आधारित और किसान–केंद्रित मॉडल में रूपांतरित हो रही है, जिसमें दीर्घकालिक स्थायित्व और आर्थिक समावेशिता दोनों पर जोर है।

तकनीकी प्रगति के क्षेत्र में सबसे उल्लेखनीय उपलब्धि भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) द्वारा विकसित देश की पहली जीन–संपादित धान की किस्मोंः डी आर आर धान 100 (कमला) और पूसा डी एस टी धान –1 का विकास है। ये किस्में CRISPR-Cas तकनीक पर आधारित हैं, जो जीनोम में अत्यंत सूक्ष्म और लक्षित परिवर्तन करती हैं, वह भी बिना किसी विदेशी डीएनए के सम्मिलन के। इन किस्मों को भारत की जैव–सुरक्षा नियामक संस्था द्वारा अनुमोदित किया गया है, जो स्वयं में एक ऐतिहासिक कदम है। ये धान की किस्में न केवल अधिक उपज देने में सक्षम हैं, बल्कि जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का सामना करने और जल के संरक्षण में भी सहायक हैंकृजो आने वाले समय में भारत की खाद्य सुरक्षा के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण साबित होंगी।

जल प्रबंधन के क्षेत्र में भी नवाचार की दिशा में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। दिल्ली स्थित पूसा संस्थान के जल प्रौद्योगिकी केंद्र ने **'इंटीग्रेटेड ड्रिप–मल्च तकनीक'** विकसित की है, जो विशेष रूप से अल्पावधि और जल–कुशल फसलों जैसे **बेबी कॉर्न** के लिए अत्यंत प्रभावी सिद्ध हो रही है। यह तकनीक किसानों को जल और पोषक तत्वों की अधिकतम उपयोगिता सुनिश्चित करने, फसल विविधता को प्रोत्साहित करने और बदलते जलवायु के बीच कृषि प्रणाली को अधिक लचीला बनाने में सहायता कर रही है। यह पहल न केवल तकनीकी दृष्टि से उन्नत है, बल्कि छोटे और सीमांत किसानों के लिए भी व्यावहारिक रूप से अनुकूल है।

कृषि जागरूकता और नीति के धरातल पर संवाद की दिशा में एक सशक्त पहल **'विकसित कृषि संकल्प अभियान'** के रूप में सामने आई है, जिसे ICAR ने कृषि एवं किसान कल्याण विभाग के साथ मिलकर 29 मई से 12 जून, 2025 तक देशभर में आयोजित किया। इस अभियान का उद्देश्य उन्नत खरीफ फसल तकनीकों का प्रचार, किसानों को सरकारी योजनाओं की जानकारी देना और उनकी प्रतिक्रियाएँ प्रत्यक्ष रूप से प्राप्त करना था। यह केवल एक जागरूकता कार्यक्रम नहीं, बल्कि नीति और ज़मीनी हकीकत के बीच की दूरी को पाटने का एक ठोस प्रयास था, जिसने किसानों को नीति–निर्माण की प्रक्रिया का सक्रिय भागीदार बनाया।

प्रसार दूत के इस विशेष अंक में हमने खरीफ फसलों से जुड़ी कृषि के नवीनतम आयामों को उजागर करने का प्रयास किया है। इस अंक में मृदा स्वास्थ्य एवं प्रबंधन तकनीकियों, सब्जियों में कीटनाशकों के सुरक्षित उपयोग, पादप

परजीवी सूत्रकृमियों की रोकथाम, और टाइटेनियम डाइऑक्साइड नैनोकणों व चावल की भूसी से बायोप्लास्टिक उत्पादन जैसे नवाचारों को शामिल किया गया है। साथ ही लघु एवं सीमान्त कृषकों के लिए समन्वित कृषि प्रणाली मॉडल, वृक्ष लसोड़ा का उपयोग, अर्बुस्कुलर माइकोराइजा कवक द्वारा औषधीय पौधों में सुधार, और पादप ऊतक संवर्धन से स्वरोजगार जैसे विषयों पर भी प्रकाश डाला गया है।

इस अंक में "नमो ड्रोन दीदी योजना" के तहत उड़ान भरती महिलाओं की प्रेरणादायक कहानियाँ भी शामिल हैं। इसके अतिरिक्त पुष्प किण्वन जैसे नए क्षेत्र की संभावनाएँ और मौखिक संचार के लिए प्रसार वार्ता के महत्व पर भी चर्चा की गई है। हमें विश्वास है कि यह अंक आपके लिए ज्ञानवर्धक और उपयोगी सिद्ध होगा तथा आप कृषि के इस बदलते परिदृश्य को बेहतर ढंग से समझ सकेंगे। आपकी प्रतिक्रिया हमारे लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, कृपया हमें अवश्य बताएं कि आपको यह अंक कैसा लगा।

संपादक

अप्रैल – जून, 2025

प्रसार दूत

वर्ष 30 2025

संरक्षक
डॉ. सीएच. श्रीनिवास राव
निदेशक
डॉ. रविन्द्र पडारिया
संयुक्त निदेशक (प्रसार)
प्रधान सम्पादक
डॉ. ए.के. सिंह
सम्पादक
डॉ. एन.वी. कुंभारे
सम्पादक मंडल
डॉ. कन्हैया सिंह
डॉ. सचिन सुरोशे
डॉ. टीकम सिंह
डॉ. गिरजेश महरा
डॉ. प्रतिभा जोशी
डॉ. वाई पी सिंह
तकनीकी सहयोग
श्री विजय सिंह जाटव
श्री लक्खी राम मीणा
श्री राजेश सिंह

शुल्क और लेख भेजने एवं पत्रिका मंगाने का पता
कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली–110012
फोनः 011–25841039
पूसा एग्रीकॉमः 1800118989 (टोल फ्री)
ई–मेंलः incharge_atic@iari.res.in
वेबसाइटः www.iari.res.in

विषय सूची | पृष्ठ संख्या

सम्पादकीय

1. सब्जियों में कृषि–कीटनाशकों के सुरक्षित और विवेकपूर्ण उपयोग — 1
2. टाइटेनियम डाइऑक्साइड नैनोकणों से युक्त मकई के भुट्टे और चावल की भूसी से बायोप्लास्टिक उत्पादनः संश्लेषण और कार्यात्मक मूल्यांकन — 5
3. मृदा स्वास्थ्य एवं प्रबंधन तकनीकियाँ — 9
4. सब्जियों में पादप परजीवी सूत्रकृमि की समस्या एवं नियंत्रण — 13
5. लघु एवं सीमान्त कृषकों की अधिक आय के लिए समन्वित कृषि प्रणाली मॉडल — 18
6. किसानों की आय हेतु उपयोगी वृक्ष लसोड़ा का संग्रह, संरक्षण एवं उपयोग — 27
7. मौखिक संचार हेतु प्रसार वार्ता का महत्व और सुचारु उपयोग — 31
8. उड़ान भर रही महिलाएँ : नमो ड्रोन दीदी योजना — 35
9. भारत में पुष्प किण्वनः संभावनाओं का अनोखा क्षेत्र — 38
10. पादप ऊतक संवर्धन तकनीक से स्वरोजगार एवं रोग मुक्त उन्नत पौध उत्पादन — 41
11. अर्बुस्कुलर माइकोराइजा कवकः औषधीय पौधों के लिए एक स्वस्थ समाधान — 46
12. श्रीअन्न एवं जैविक खेती में खरपतवार प्रबंधन — 50

वार्षिक शुल्क ₹ 150/– मनीआर्डर द्वारा

सब्जियों में कृषि–कीटनाशकों के सुरक्षित और विवेकपूर्ण उपयोग

बी.एस.तोमर, गोगराज सिंह जाट एवं जोगेन्द्र सिंह
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110 012

चीन के बाद भारत का सब्जी उत्पादन में दूसरा स्थान है। राष्ट्रीय बागवानी मंडल, गुरुग्राम (2013–14) के अनुसार भारत में सब्जी फसलें लगभग 9.4 मिलियन हैक्टर क्षेत्र में होती है, तथा कुल उत्पादन 162.90 मी. टन है एवं उत्पादकता 17.4 मिलियन टन प्रति हैक्टर है। इन सब्जियों का स्वस्थ जीवन में महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। इन सब्जियों में कई पोषक तत्वों जैस कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, विटामिन–ए, विटामिन–बी, विटामिन–सी, फाइबर और फोलिक एसिड और बहुत से खनिज पदार्थ पर्याप्त मात्रा में होते हैं जिनका मानव आहार में एक महत्वपूर्ण योगदान है। सब्जी फसलें कैंसर, आघात और हृदय रोगों के जोखिम को कम करने के साथ–साथ रक्तचाप को सामान्य बनाए रखने और रक्त कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करने में भी सहायक होती है। प्याज एवं लहसुन में पाये जाने वाले रासायनिक पदार्थ कुरसिटिन, एल्लाइल प्रोपायल सल्फाइड एवं डाइअलाइल डाई–सल्फाइड आदि जीवाणु–रोधी, फफूंद–रोधी एवं वायरस रोधी होते हैं। उन्नत किस्मों का प्रयोग (मुख्यतः संकर किस्मों), उन्नत पौध उत्पादन तकनीक, बीजोपचार के उन्नत तरीकों, कीट एवं बीमारियों के नियंत्रण के लिए उन्नत एवं आवश्यकता से अधिक कीटनाशकों का प्रयोग, मृदा की उर्वरा शक्ति बढ़ाने के लिए अधिक रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग, खरपतवार नियंत्रण के लिए खरपतवारनाशियों का प्रयोग आदि से पिछले कुछ वर्षों से सब्जी फसलों में उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ी है। परंतु अधिक रसायनों का प्रयोग इन सब्जियों मे करने से मानव स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ रहा है तथा पर्यावरण भी प्रदूषित होता जा रहा है। साथ ही साथ पत्तेदार सब्जियों को बड़े शहरों में गंदे पानी के नालों में उगाना आदि जानकारीयों का किसानों को अभाव है। अतः इन सब जानकारीयों को सब्जी उत्पादन करने वाले किसानों तक पहुँचना अत्यधिक आवश्यक हो गया है कि किस प्रकार के रसायनों का प्रयोग कब व कैसे करें तथा कितनी मात्रा में करें। साथ ही साथ ये भी महत्वपूर्ण है कि इनके अलावा किन खादों का प्रयोग करके मृदा की उर्वरा शक्ति बढ़ाई जा सके जिससे इस प्रकार की समस्याओं से निजात मिल सके।

उर्वरा शक्ति का विकास एवं संरक्षणः

सब्जियों के उत्पादन के लिए रासायनिक उर्वरकों के अलावा अच्छी प्रकार से सड़ी हुई गोबर की खाद का प्रयोग करना चाहिए। खाद व उर्वरकों का प्रयोग करने से पहले निकटतम कृषि विज्ञान केंद्र या जिला कृषि विभाग की मृदा प्रयोगशाला से मिट्टी की जांच करवा लेनी चाहिए। मिट्टी की जांच के अनुसार उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। कच्ची गोबर की खाद का प्रयोग ना करें ये दीमक को आमंत्रित करती है। जिससे उत्पादन कम होने के साथ साथ उत्पाद की गुणवत्ता भी कम हो जाती है गोबर की खाद को अच्छी तरह सड़ने के लिए बड़े गड्डों में उसका भंडारण करना चाहिए। जिससे मृदा की उर्वरा शक्ति लगातार बनी रहे तथा अधिक रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करने से मृदा की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने वाले लाभकारी जीवाणुओं को नष्ट होने से बचाया जा सके। केंचुए को किसान का मित्र भी कहा जाता है क्योंकि यह खेतों में कच्ची गोबर की खाद, पोधों के अवशेषों आदि को खाकर अच्छी प्रकार से सड़ा देता है जिससे मृदा की उर्वरा शक्ति बढ़ाने में सहायता प्रदान करता है। साथ ही साथ इस प्रकार की मृदा में उगाई गयी सब्जियों की गुणवत्ता भी अधिक होती है तथा मृदा में लाभकारी जीवाणुओं को बनाए रखा जा सकता है। इस प्रकार केंचुए से खाद भी तयार की जा सकती है जिसको वर्मीकम्पोस्ट के नाम से जाना जाता

है। सही समय पर, सही जगह पर तथा सही मात्रा में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करने के अलावा खेत जब खाली हो तब हरी खाद के लिए प्रयोग होने वाली दलहनी फसलों जैसे ढ़ैंचा, सनहेम्प आदि को खेतों में उगायें तथा जब ये पुष्पन की अवस्था में हो तब इनको मृदा में मिला लेना चाहिए जिससे मृदा में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ जाती है जिससे उर्वरकों की बचत के साथ साथ मृदा स्वास्थ्य पर पड़ने वाले विपरीत प्रभावों से भी बचाया जा सकता है। एवं अधिक उत्पादन के साथ साथ उत्पाद की गुणवत्ता भी बढ़ जाती है एवं ऐसे उत्पाद का बाजार भाव भी अधिक मिलता है। एक ही फसल को लगातार एक ही खेत में बुआई ना करें ऐसा करने से फसलों में अधिक कीटों एवं बीमारियों का प्रकोप बढ़ जाता है। जिससे उत्पादन घटने के साथ–साथ उत्पाद की गुणवत्ता भी कम हो जाती है एवं बाजार में ऐसे उत्पादों को खरीदने के लिए ग्राहक भी नहीं मिलते है। अतः एक ही खेत में अलग अलग समय पर विभिन्न प्रकार की सब्जियों का चयन करना चाहिए। सब्जियों में फसल चक्र मुख्यतः कीटों एवं बीमारियों को कम करने, पोषक तत्वों का समेकित प्रबंधन करने, पोषक तत्वों की मात्रा खेत में बढ़ाने आदि उद्देश्यों के लिए किया जाता है क्योंकि अलग–अलग कुल की सब्जियों की पोषक तत्वों की आवश्यकता अलग अलग होती है।

स्वस्थ सब्जी उत्पादन के लिए ध्यान रखने योग्य बातें:

कम से कम रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करें तथा इनके स्थान पर नीम की खली, नीम की फलियों तथा पत्तियों का प्रयोग खाद के रूप में करें। ऐसी फसलों का चयन करें जो अधिक उत्पादन दे सकें। तथा पत्तेदार सब्जियों की खेती ऐसे स्थानों पर न करें जहाँ इटों के भट्टे लगे हों क्योंकि इनकी धुँआ से निकलने वाले छोटे–छोटे कण ओस की बूंदों के साथ इनकी पत्तियों पर जमा हो जाते हैं जो मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है। तथा कुछ भयानक बीमारियों के होने की संभावना बढ़ जाती है। जड़ वाली सब्जियों जैसे कि मूली, गाजर, शलजम तथा चुकंदर की खेती ऐसे स्थानों पर न करें जहां गंदे पानी का प्रयोग होता हो क्योंकि इस प्रकार के जल में हानिकारक रसायन एवं भारी धातु पाये जाते हैं जो मानव स्वास्थ्य को नुकसान पहुँचाते हैं। रासायनिक कीटनाशकों, उर्वरकों एवं खरपतवारनाशी आदि का भरपूर ज्ञान किसानों को होना चाहिए की इनका प्रयोग फसल में कब करें, कैसे करें तथा कितनी मात्रा मे करें जिससे उत्पादन भी टिकाऊ बना रहे तथा मृदा की उर्वरा शक्ति लगातार बनी रहे। जहाँ तक सम्भव हो जैव–रसायनों का ही प्रयोग करें। रासायनिक खरपतवार नियन्त्रण के लिए पेन्डीमिथेलीन (30 ई.सी.) 400 मि.ली. की मात्रा प्रति एकड़ को 200 ली. पानी में रोपाई से पहले छिड़काव करें। अगर खरपतवारों का प्रकोप अंकुरण के बाद भी हो तो अंकुरणप्रान्त खरपतवारनाशी राउंड–उप का प्रयोग खेत में करना चाहिए। भूमि और जलवायु के अनुकूल ही किस्मों का चयन करना चाहिए। रासायनिक कीटनाशकों, उर्वरकों एवं खरपतवारनाशी आदि विश्वस्त स्रोत से ही खरीदें। गोबर की खाद या कम्पोस्ट, सुपर फॉस्फेट व म्युरेट ऑफ पोटाश खेत तैयार करते समय मिट्टी में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। बीजाई से पूर्व बीज उपचार अवश्य करना चाहिए। रोगों और कीड़ों से ग्रसित पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें। नत्रजन खाद डालने के बाद सिंचाई अवश्य कर दें। खाद पौधे के पत्तों या अन्य भाग पर नहीं पड़नी चाहिए। फल भूमि से लगकर खराब नहीं हो जाए इसके लिए पौधे को सहारा मिले, ऐसी व्यवस्था करें। पौध संरक्षण उपायों को उचित समय पर ठीक विधि से अपनायें तथा रसायनों के उपयोग के लिए आवश्यक सावधानियों को प्रयोग में लायें। कीटनाशी तथा फफूँदनाशी दवाइयों का घोल आवश्यकता होने पर बनायें। आपस में अनुकूलता के आधार पर ही दवाइयों को मिलायें। दवाई के घोल को प्लास्टिक या शीशे के बर्तन में ही घोलें। रसायनों के प्रयोग के उपरांत आवश्यक प्रतिक्षा अवधि के बाद ही तुड़ाई करें ताकि कटाई उपरांत उत्पादन में रसायन का अवशेष न रहे। रसायनों का कम से कम प्रयोग करें तथा जैविक विकल्पों पर बल दें। तुड़ाई सावधानी से उचित समय पर करें तथा इस बात का ध्यान रखें कि न तो पौधे को और न ही उत्पादन को हानि पहुंचे।

जाल फसल का प्रयोग करें: फसलें जो मुख्य फसल में लगने वाले प्रमुख कीटों को अपनी और आकर्षित करती हैं जिससे मुख्य फसल को इन हानिकारक कीटों के प्रकोप से बिना कीटनाशकों का प्रयोग किये बचाया जा सके, जाल

फसलें कहलाती हैं। ये जाल फसलें मुख्य फसल की परिधि या उनके मध्य में लगाई जा सकती है। जाल फसलें उसी समय लगानी चाहिए जब मुख्य फसल में कीटों का प्रकोप अधिक हो जिससे ये कीट जाल फसलों की और आकर्षित हो और उनका जीवन चक्र इन फसलों पर पूरा हो उससे पहले इनको नष्ट किया जा सके। जब पत्ता गोभी के खेत के चारों तरफ कोलार्ड की फसल लगाई जाती है तो पत्ता गोभी में लगने वाले डायमंड बैक मोथ का प्रकोप कम हो जाता है। जब पत्ता गोभी के खेत के चारों तरफ चाइनीज पत्ता गोभी की फसल लगाई जाती है तो पत्ता गोभी में लगने वाले माहू का प्रकोप कम हो जाता है। पत्तागोभी के खेत में सरसों की एक कतार खेत के चारों तरफ लगाने से हेड कैटरपिलर तथा माहू का प्रकोप कम होता है। जब गाजर के खेत के चारों तरफ प्याज एवं लहसुन की फसल लगाई जाती है तो गाजर में लगने वाले गाजर जड़ मक्खी का प्रकोप कम हो जाता है। जब पत्तागोभी के खेत के चारों तरफ टमाटर की फसल दो सप्ताह पहले लगाई जाती है तो पत्ता गोभी में लगने वाले डायमंड बैक मोथ का प्रकोप कम हो जाता है। जब पत्तागोभी के खेत के चारों तरफ मूली की फसल दो सप्ताह पहले लगाई जाती है तो पत्ता गोभी में लगने वाले जड़ मैगट तथा फलिया बीटल का प्रकोप कम हो जाता है।

फेरोमेन ट्रैप का प्रयोगः भारत में ही विकसित हुए फेरोमेन ट्रैप का प्रयोग सब्जी फसलों में कीटों के नियंत्रण के लिए करना चाहिए। इन फेरोमेन ट्रैप में मादा कीटों से निकलने वाले हारमोंस का प्रयोग किया जाता है ये कैप्सूल जब खेतों में ट्रैप में रखे जाते हैं तो इनसे मादा कीटों की गंध निकलती है जो नर को अपनी और आकर्षित करती है और नर कीट इनमें प्रवेश कर जाते हैं। 12–15 फेरोमेन ट्रैप का प्रयोग प्रति हेक्टेयर के हिसाब से करना चाहिए इस प्रकार से हानिकारक रसायनों में होने वाले खर्चे से किसानों को निजात मिलती है एवं कीटों का भी एक हद तक नियंत्रण हो जाता है। भारत सरकार एवं राज्य सरकारें भी कीट नियंत्रण की इस वैज्ञानिक विधि को सराहनीय कदम मानती है। फल मक्खी के रोकथाम के लिए मैलाथियॉन 0.02 प्रतिशत (200 मिली ग्रा. प्रति लीटर) का घोल बना कर छिड़काव करें। मक्खियों को आकर्षित कर मारने के लिए मीठे जहर, जो 50 मिली लीटर मैलाथियान का आधा कि.ग्रा. चीनी या गुड़ के साथ मिला कर 50 लीटर पानी में बनाये गए घोल का प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें। फल मक्खी के नरों को आकर्षित करने के लिए ''मिथाइल यूजीनोल'' गन्ध पाश का प्रयोग भी किया जा सकता है।

दलहनी सब्जी फसलों में टीकाकरण करके करें बुआईः दलहनी सब्जी फसलों जैसे फ्रेंच बीन, लोबिया, ग्वार आदि की बुआई से पूर्व बीजों को फफूंदनाशक, कीटनाशक एवं राइजोबियम कल्चर से उपचारित करें। राइजोबियम कल्चर (250 ग्रा. प्रति एकड़) से उपचारित करना अत्यंत लाभप्रद होता है इससे पोधों की जड़ों में अधिक नत्रजन स्थिरीकरण ग्रंथिकाए बनती हैं जिससे अधिक मात्रा में वायुमंडलीय नत्रजन का स्थिरीकरण होता है जिससे इनकी उपज बढ़ने के साथ साथ गुणवत्ता में भी वृद्धि होती है व खेत में नाइट्रोजन की मात्रा भी बढ़ जाती है। गुड़ का 5 प्रतिशत (50 ग्रा. प्रति लिटर पानी में) के हिसाब से घोल बना कर राइजोबियम कल्चर को अच्छे से मिला लें। बीजों को सीमेंट के फर्श या पॉलीथीन शीट पर फैला लें तथा कल्चर के घोल को बीजों पर डाल कर समान रूप से लिप्ट कर लें। उपचारित बीज को छायादार जगह पर सुखा के बुआई करें। अन्य सब्जी फसलो में बीज को बोने से पूर्व फफूँदनाशक रसायन से सूखा उपचार कर लेना चाहिए (2–3 ग्राम कैप्टान या बाविस्टीन इत्यादि फफूंदनाशक प्रति कि.ग्रा. बीज)। मिट्टी का भी फफूँदनाशक रसायन से उपचार करें।

स्वस्थ पौध उत्पादन के लिए कीट अवरोधी हरित गृह का प्रयोग करेंः टमाटर, मिर्च तथा बैंगन की कीट एवं विषाणु से मुक्त स्वस्थ पौध तैयार करने के लिए 50–60 मेश की नेट से बने कीट अवरोधी गृह में पौधशाला तैयार करें। जब पौध का जमाव हो जाये तो क्यारियों को पॉलीथीन से ढक दें इससे पौधशाला का तापमान बढ़ जाता है तथा पौध बड़वार अच्छी होती है। टमाटर, मिर्च तथा बैंगन की एक अच्छी एवं स्वस्थ पौध तैयारी के समय वातावरण का तापमान 25–28 डिग्री सेल्सियस के मध्य होना चाहिए। पौधशाला में पौध उठी हुई क्यारियों पर तैयार करना चाहिए। इन क्यारियों की लंबाई कम से कम 3 मीटर व चौड़ाई 0.6 मीटर रखनी चाहिए। बीज को 5 से.मी. दूर पंक्तियों में लगाकर गोबर की खाद या मिट्टी

की पतली तह से ढक कर हजारे की सहायता से हल्की सिंचाई करनी चाहिये। जब पौध 35–40 दिन की हो तथा 12–15 सें.मी. ऊँची हो जाये तब खेत में रोपाई कर दें।

स्वस्थ पौध उत्पादन के लिए प्लग–ट्रे का प्रयोगः प्लग–ट्रे जिनके उल्टे पिरामिड आकार रूपी एक खांचे की (1.5 इंच साइज) अद्यतन मात्रा 18–20 घन हो जिसमें कोको–पीट, वर्मीकुलाइट और परलाइट का 3:1:1 भाग का मिश्रण बनाकर ट्रे में भर लें एवं बीजों की बुवाई 1 से.मी. गहराई पर करें। बीज की बुआई करने के पश्चात प्लग–ट्रे पर वर्मीकुलाइट की परत चढ़ा दें और हल्के पानी का छिड़काव करें। उर्वरकों जैसे नत्रजन, फॉस्फोरस और पौटेशियम (20:20:20 ग्रेड) का घोल बना कर 100–150 पीपीएम (100–150 मिली ग्राम प्रति लीटर पानी में) की दर से 2–3 दिन अन्तराल पर प्लग–ट्रे में छिड़काव करें।

जैविक पद्धति से पादप रोग नियंत्रण: किसी भी अवस्था में जैविक पद्धति का प्रयोग करने से एक रोगजनक के जीवित बने रहने की आशा अथवा उसकी क्रियाशीलता को किसी दूसरे जीव (मनुष्य को छोड़कर) द्वारा कम कर दिया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप उस रोग जनक से उत्पन्न रोग में कमी हो जाती है।

जैविक रोगनाशकों की प्रयोग विधि

1. **पौधशाला का उपचारः** जैविक पाउडर 5–10 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से गोबर की खाद में मिला कर नर्सरी तैयार कर लें। भूमि का सौर्य उपचार भी लाभकारी होता है।
2. **बीज उपचारः** जैविक रोगनाशक पाउडर 2–4 ग्राम प्रति कि.ग्रा. की दर से गोंद या कार्बोक्सिमिथाइल सेल्युलोज (सी.एम.सी.) 2 ग्राम/कि.ग्रा. बीज के साथ मिलाकर बीज का उपचार करें एवं छाया में सुखा कर बुवाई कर दें।
3. **राइजोम उपचारः** जैविक पाउडर 400–500 ग्राम प्रति क्विंटल कंद की दर से कंद/प्रकंद का उपचार गोंद अथवा सी.एम.सी. (50–100 ग्राम) के साथ मिला कर करें एवं छाया में सुखा कर खेत में रोपाई करें।
4. **कलिका/कटिंग उपचारः** जैविक पाउडर 400–500 ग्राम प्रति क्विंटल की दर से या कलिका आकार के अनुसार मात्रा में उपचार करें एवं खेत में रोपाई करें।
5. **मृदा उपचारः** मृदा उपचार हेतु जैविक पाउडर 2–5 कि.ग्रा. को 25–30 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद में मिलाकर हल्की नमी के साथ एक सप्ताह तक छाया में रखने के उपरांत बुआई से पूर्व प्रति हेक्टेयर में प्रयोग किया जाए।
6. **पौध उपचारः** पौध रोपाई के समय पौधशाला से पौध उखाड़ कर जड़ों को जैविक उत्पाद के 2–4 ग्रा. प्रति लीटर पानी के घोल में 15 मिनट डुबोकर खेत में रोपाई कर दें। ये सभी उपचार क्रियाएं विशेषकर छाया में ही करनी चाहिए।

टाइटेनियम डाइऑक्साइड नैनोकणों से युक्त मकई के भुट्टे और चावल की भूसी से बायोप्लास्टिक उत्पादन: संश्लेषण और कार्यात्मक मूल्यांकन

रेनू सिंह, अनामिका ठाकुर, साक्षी शमा, मनोज श्रीवास्तव
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110 012

पेट्रोलियम से बने प्लास्टिक की सर्वव्यापकता – जो अपनी टिकाऊपन, कम लागत और बहुमुखी प्रतिभा के लिए मूल्यवान है – पर्यावरण पर बहुत भारी खर्च के साथ आई है। आज, प्लास्टिक वैश्विक लैंडफिल कचरे का लगभग 25% हिस्सा है और दुनिया के महासागरों में लगभग 51 ट्रिलियन माइक्रोप्लास्टिक कणों में विखंडित है – हमारी आकाशगंगा के तारों की तुलना में 500 गुना अधिक। पारंपरिक डिस्पोजेबल प्लास्टिक जैसे बैग, बोतलें और मछली पकड़ने की रेखाएँ दशकों या सदियों (क्रमशः 20, 450 और 600 साल) तक बनी रहती हैं, अंततः सूक्ष्म टुकड़ों में टूट जाती हैं जो समुद्री पारिस्थितिक तंत्र को बाधित करती हैं और खाद्य श्रृंखलाओं में प्रवेश करती हैं। इसके विपरीत, बायोप्लास्टिक्स– नवीकरणीय बायोमास से प्राप्त पॉलिमर–वृत्ताकारता का मार्ग प्रदान करते हैं। स्टार्च और सेल्यूलोज आधारित सामग्री उपयुक्त परिस्थितियों में पानी, CO_2 और बायोमास में पूरी तरह से बायोडिग्रेड हो जाती हैं। उनका बाजार तेजी से विस्तार कर रहा है, 2022 में 1–8 मिलियन टन का अनुमान है और अकेले पैकेजिंग उस मात्रा का लगभग आधा हिस्सा है। बहरहाल, बायोपॉलिमर अक्सर पेट्रो प्लास्टिक की तुलना में हीन यांत्रिक शक्ति, थर्मल स्थिरता और बाधा प्रदर्शन का प्रदर्शन करते हैं।

सेल्यूलोज के स्रोत के रूप में कृषि अवशेष

अकेले भारत में सैकड़ों मिलियन टन लिग्नोसेल्यूलोसिक अवशेष पैदा होते हैं – चावल की भूसी, चावल का भूसा, मकई का भुट्टा और गन्ने की खोई – जो सेल्यूलोज (30–40%), हेमीसेल्यूलोज (20–30%) और लिग्निन (15–20%) से भरपूर होते हैं। मकई का भुट्टा, मक्का का एक उपोत्पाद ('अनाज की रानी' चावल और गेहूं के बाद तीसरा सबसे अधिक उत्पादित अनाज), में 27.71% सेल्यूलोज और 38.78% हेमीसेल्यूलोज होता है, जबकि चावल की भूसी अनाज के द्रव्यमान का 20% हिस्सा होती है – दुनिया भर में सालाना लगभग 148 मिलियन टन। दुर्भाग्य से, अधिकांश किसान इन अवशेषों को जला देते हैं, जिससे ग्रीनहाउस गैसें और विशाक्त उत्सर्जन उत्पन्न होते हैं। उन्हें बायोप्लास्टिक के लिए नैनोसेल्यूलोज में बदलने से प्रदूषण कम होता है और मूल्यवान, उच्च प्रदर्शन वाली सामग्री बनती है।

(ए)

(बी)

चित्र 1 (ए) मकई के भुट्टे का अपशिष्ट (बी) चावल की भूसी

मकई के भुट्टे से सेल्यूलोज निष्कर्षण: तकनीक

1. क्षारीय विरंजन

पिसे हुए मकई के भुट्टे के पाउडर (≤ 30 मेश) को 5–10% NaOH के साथ 80°C पर 2–4 घंटे के लिए उपचारित किया जाता है, जिससे लिग्निन और हेमीसेल्यूलोज घुलनशील हो जाते हैं। ठोस अंश को तटस्थ pH तक धोया जाता है और फिल्टर किया जाता है।

2. ब्लीचिंग

विरंजन अवशेषों को 5% सोडियम क्लोराइट या हाइड्रोजन पेरोक्साइड में 70–80° C पर 2–3 घंटे के लिए डुबोया जाता है, जिससे रंगहीन हो जाता है और अवशिष्ट लिग्निन निकल जाता है। बार–बार धोने से शुद्ध सेल्यूलोज प्राप्त होता है।

3. एसिड हाइड्रोलिसिस

शुद्ध सेल्यूलोज को 2–5 M H_2SO_4 के साथ 45–60° C पर 30–90 मिनट के लिए हाइड्रोलाइज किया जाता है, जिससे अनाकार क्षेत्र अलग हो जाते हैं और नैनोक्रिस्टलाइन सेल्यूलोज मुक्त हो जाता है। घोल को सेंट्रीफ्यूज किया जाता है, तटस्थता के लिए डायलाइज किया जाता है, और एक बढ़िया नैनोसेल्यूलोज पाउडर बनाने के लिए फ्रीज में सुखाया जाता है।

4. एंजाइमेटिक उपचार

कठोर रसायनों को कम करने के लिए, लैकेस या सेल्यूलेज एंजाइम हल्के परिस्थितियों (पीएच 4.5–5.5, 50 डिग्री सेल्सियस) के तहत क्रमशः लिग्निन या अनाकार सेल्यूलोज को चुनिंदा रूप से विघटित करते हैं। इससे उच्च उपज, उच्च शुद्धता वाला सेल्यूलोज प्राप्त होता है जो बायोप्लास्टिक मिश्रण के लिए उपयुक्त है।

5. भाप विस्फोट और अल्ट्रासोनिकेशन

मकई के भुट्टे को उच्च दबाव वाली भाप (1.5 एमपीए) के अधीन किया जाता है, जिसके बाद तेजी से विघटन होता है, जो लिग्नोसेल्यूलोसिक संरचना को बाधित करता है। इसके बाद का अल्ट्रासोनिकेशन (20 kHz, 30 मिनट) रेशों को फैलाता है और नैनोस्केल तंतुओं में विभाजन को बढ़ावा देता है।

6. आयनिक द्रव निष्कर्षण

नवीन दृष्टिकोण सेलुलोस को सीधे इमिडाजोलियम आधारित आयनिक द्रव में 100–120 डिग्री सेल्सियस पर घोलते हैं, फिर इसे पानी या इथेनॉल के साथ अवक्षेपित करते हैं। यह विधि उच्च पुनर्प्राप्ति और न्यूनतम पर्यावरणीय प्रभाव प्रदान करती है, लेकिन महंगी बनी हुई है।

चित्र 2 मकई के भुट्टे से सेल्यूलोज निकालना

चावल की भूसी से सेल्यूलोज निष्कर्षण

चावल की भूसी से निष्कर्षण मकई के कोब तकनीक के समान है, लेकिन इसमें उच्च सिलिका (15–20%) का सामना करना पड़ता है। क्षारीय डेलिग्निफिकेशन और ब्लीचिंग के बाद, लिग्निन अंश को ऊर्जा या हरित रसायनों के लिए पुनर्प्राप्त किया जा सकता है, जबकि सिलिका को एसिड लीच या कैल्सीन करके अनाकार SiO_2 प्राप्त किया जाता है। अल्ट्रासोनिकेशन के बाद एसिड

हाइड्रोलिसिस सेल्यूलोज को नैनो–आकार के तंतुओं में तोड़कर नैनोसेल्यूलोज का उत्पादन करने में मदद करता है।

टाइटेनियम डाइऑक्साइड नैनोकणों का संश्लेषण

1. सोल–जेल विधि

टाइटेनियम टेट्रा आइसोप्रोपॉक्साइड को कमरे के तापमान पर अम्लीय कटैलिसीस के तहत आइसोप्रोपेनॉल में हाइड्रोलाइज किया जाता है, जिससे एक पारदर्शी सोल बनता है। 60–80 डिग्री सेल्सियस पर नियंत्रित वाष्पीकरण सोल को TiO_2 में बदल देता है, जो 400–500 डिग्री सेल्सियस पर कैल्सीनेशन करने पर मुख्य रूप से एनाटेस चरण नैनोकण (10–30 एनएम) देता है।

2. हाइड्रोथर्मल विधि

टाइटेनियम प्रीकर्सर और बेस के जलीय घोल को 6–24 घंटे के लिए 150–200 डिग्री सेल्सियस पर एक आटोक्लेव में सील किया जाता है, जिससे उच्च तापमान कैल्सीनेशन के बिना अत्यधिक क्रिस्टलीय, समान TiO_2 नैनोकण बनते हैं।

3. माइक्रोवेव सहायता प्राप्त संश्लेषण

माइक्रोवेव विकिरण (600) के तहत पानी या अल्कोहल में 5–10 मिनट के लिए Ti अग्रदूत को तेजी से गर्म करने से संकीर्ण आकार वितरण के साथ अल्ट्रा फाइन TiO_2 प्राप्त होता है।

4. ग्रीन संश्लेषण

पौधे के अर्क (जैसे, चाय पॉलीफेनोल, फलों के छिलके) कम करने वाले और कैपिंग एजेंट के रूप में कार्य करते हैं, जिससे परिवेष की स्थितियों में TiO_2 का निर्माण संभव होता है। यह पर्यावरण अनुकूल मार्ग रासायनिक अपशिष्ट और ऊर्जा खपत को कम करता है।

बायोप्लास्टिक फिल्म निर्माण

निकाले गए नैनोसेल्यूलोज (2–5 वजन प्रतिशत) और TiO_2 नैनोकणों (0.5–2 वजन प्रतिशत) को 30 मिनट के लिए 50 डिग्री सेल्सियस पर उच्च कतरनी मिश्रण द्वारा ग्लिसरॉल प्लास्टिसाइज्ड मैट्रिक्स (15–20 वजन प्रतिशत) में फैलाया जाता है। सजातीय चिपचिपा निलंबन विलायक के रूप में टेफ्लॉन पैन में डाला जाता है और दरार को रोकने के लिए नियंत्रित आर्द्रता के तहत 40 डिग्री सेल्सियस पर सुखाया जाता है। परीक्षण से पहले फिल्मों को छीलकर 48 घंटे के लिए 23 डिग्री सेल्सियस /50% आरएच पर कंडीशन किया जाता है। एक्सट्रूज़न या इंजेक्शन मोल्डिंग के माध्यम से वैकल्पिक निर्माण भी थोक उत्पादन के लिए संभव है।

बायोप्लास्टिक के लाभ और महत्व

बायोप्लास्टिक पारंपरिक प्लास्टिक के पर्यावरण के अनुकूल विकल्प हैं, जो मकई स्टार्च, चावल की भूसी और सेल्यूलोज जैसे नवीकरणीय संसाधनों से बने होते हैं। उनका प्राथमिक लाभ उनकी बायोडिग्रेडेबिलिटी में निहित है, जो प्लास्टिक प्रदूषण और लैंडफिल कचरे को कम करने में मदद करता है। वे गैर विषैले होते हैं, उपयुक्त परिस्थितियों में खाद बन सकते हैं, और पेट्रोलियम आधारित प्लास्टिक की तुलना में उनके कार्बन फुटप्रिंट कम होते हैं। बायोप्लास्टिक एक परिपत्र अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने, जीवाश्म ईंधन पर निर्भरता को कम करने और माइक्रोप्लास्टिक के कारण होने वाले समुद्री और मिट्टी के प्रदूषण को कम करने के लिए महत्वपूर्ण हैं। इसके अतिरिक्त, बायोप्लास्टिक उत्पादन में मकई के भुट्टे और चावल की भूसी जैसे कृषि अपशिष्ट का उपयोग अवशेषों में मूल्य जोड़ता है, ग्रामीण अर्थव्यवस्थाओं का समर्थन करता है, और फसल के बचे हुए हिस्से को जलाने से पर्यावरणीय नुकसान को कम करता है।

निष्कर्ष

प्लास्टिक प्रदूषण की वैश्विक चुनौती के लिए ऐसे संधारणीय नवाचारों की आवश्यकता है जो कार्यक्षमता से समझौता किए बिना पर्यावरणीय नुकसान को कम करें। मकई के भुट्टे और चावल की भूसी जैसे कृषि अवशेषों से प्राप्त बायोप्लास्टिक पारंपरिक पेट्रोलियम–आधारित प्लास्टिक के लिए एक पर्यावरण–अनुकूल विकल्प प्रदान करते हैं। सेल्यूलोज और हेमीसेल्यूलोज से भरपूर ये लिग्नोसेल्यूलोसिक अपशिष्ट प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं, फिर भी इनका बड़े

पैमाने पर कम उपयोग किया जाता है, जो अक्सर जलने पर प्रदूषक बन जाते हैं। बायोप्लास्टिक उत्पादन के लिए इन अवशेषों का उपयोग न केवल अपशिष्ट प्रबंधन को संबोधित करता है, बल्कि मूल्यवर्धित उत्पाद बनाकर ग्रामीण जैव–अर्थव्यवस्थाओं का भी समर्थन करता है।

इन बायोप्लास्टिक में टाइटेनियम डाइऑक्साइड (TiO_2) नैनोकणों का एकीकरण थर्मल स्थिरता, यांत्रिक शक्ति और रोगाणुरोधी गुणों को बढ़ाकर उनके प्रदर्शन को और बढ़ाता है। TiO_2 UV सुरक्षा में भी योगदान देता है और बायोप्लास्टिक के कार्यात्मक जीवनकाल को बढ़ाता है, जिससे वे पैकेजिंग, कृषि और बायोमेडिकल अनुप्रयोगों के लिए उपयुक्त बन जाते हैं। इसके अलावा, हरित निष्कर्षण और संश्लेषण तकनीकों को अपनाना – जैसे कि एंजाइमेटिक डेलिग्निफिकेशन, क्षारीय उपचार, आयनिक तरल प्रसंस्करण और पर्यावरण अनुकूल नैनोकण निर्माण – यह सुनिश्चित करता है कि संपूर्ण उत्पादन चक्र पर्यावरणीय स्थिरता के अनुरूप बना रहे।

आशाजनक होने के बावजूद, ऐसे बायोप्लास्टिक्स के विकास में अभी भी मापनीयता, विभिन्न परिस्थितियों में बायोडिग्रेडेबिलिटी के मानकीकरण और आर्थिक व्यवहार्यता के संदर्भ में चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। सामग्री के गुणों को अनुकूलित करने, उद्योग मानकों को स्थापित करने और प्रभावी जीवन–काल प्रबंधन सुनिश्चित करने के लिए निरंतर अनुसंधान और नवाचार आवश्यक हैं। फिर भी, यह दृष्टिकोण कृषि अपशिष्ट मूल्यांकन, नैनो प्रौद्योगिकी और हरित रसायन विज्ञान को मिलाकर कार्यात्मक, बायोडिग्रेडेबल प्लास्टिक का उत्पादन करके एक समग्र समाधान का उदाहरण है जो हमारे पारिस्थितिक पदचिह्न को काफी कम कर सकता है। नीति, अनुसंधान और सार्वजनिक जागरूकता में सही समर्थन के साथ, ये बायोप्लास्टिक एक परिपत्र, संधारणीय भविष्य की ओर संक्रमण में एक प्रमुख स्तंभ हो सकते हैं।

मृदा स्वास्थ्य एवं प्रबंधन तकनीकियाँ

डॉ महेश चंद मीना
भा.कृ.अनु.प–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली–110 012

सघन कृषि व उच्च उत्पादकता वाली फसलों के प्रयोग के फलस्वरूप मृदा से लगातार पोषक तत्वों का दोहन हो रहा है। फसलों के पोषक तत्वों की मांग को पूरा किए बिना अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त करने की होड़ लगी है जिससे मृदा की उर्वराशक्ति पर कुप्रभाव पड़ा है। किसानों के द्वारा कार्बनिक–खादों का प्रयोग नहीं करने की वजह से मृदा के भौतिक एवं जैविक गुणों में नकारात्मक प्रभाव पड़ा है। फसल–चक्र न अपनाने के कारण, न केवल मृदा–स्वास्थ्य में गिरावट आई है बल्कि खरपतवार तथा कीड़े और बीमारियों का प्रकोप बढ़ता जा रहा है। कुल मिलाकर यही कहा जा सकता है कि मृदा–स्वास्थ्य में उत्पन्न हुये विकारों के कारण कृषि की समस्याएँ दिन प्रति दिन बढ़ रही है और मृदा–उत्पादकता में कमी आ रही है। एकल फसल प्रणाली, गहन जुताई एव साफ–सुथरी खेती की पद्दति से मृदा की निचली सतह भी कठोर हो रही है कृषि भूमि का जोत आकार बहुत तेजी से घटता जा रहा है। मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक घटक व पोषक तत्वों की उपयोग दक्षता और फसल उत्पादकता में सुधार के लिए अवशेषों के प्रबंधन, उपयुक्त फसलचक्र का चयन, बेहतर जुताई पद्धति एवं पोषक तत्वों को सन्तुलित मात्रा में इस्तेमाल करने के साथ ही यह भी देखना होगा कि कहीं गौण एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के कारण उर्वरकों की दक्षता में कमी तो नहीं हो रही है। उर्वरकों का सही मात्रा में, सही समय एवं सही विधि से प्रयोग किया जाना चाहिए। फसल तथा उसमें प्रयुक्त जैविक खादों तथा पोटाश, फास्फोरस एवं गोण व सूक्ष्म पोषक तत्वों के अवशिष्ट प्रभाव को ध्यान में रखते हुए आगामी फसल के लिए उर्वरकों की मात्रा का निर्धारण किया जाना चाहिए इसलिये मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होता है। रासायनिक उर्वरकों के संतुलित प्रयोग के साथ ही जैविक खादों एवं जैव उर्वरकों का यथासम्भव इस्तेमाल से कृषि की लागत को कम करके अधिक उत्पादन लेने व मृदा स्वास्थ्य को बनाये रखने की सर्वोतम मृदा प्रबंधन प्रौद्योगिकी निम्न प्रकार से है।

मृदा परीक्षण के आधार पर पोषक तत्वों का प्रयोग

मृदा परीक्षण, मृदा की उर्वरता और उत्पादकता के बारे में एक सम्पूर्ण जानकारी प्रदान करती है। यह किसानों की खेती में अनावश्यक उर्वरक के खर्चे को कम करने में सहायक होती है। मृदा की उत्पादन क्षमता उसकी उर्वरा शक्ति पर निर्भर करती है। पौधे अपने विकास एवं बढवार के लिए आवश्यक पोषक तत्व मृदा से प्राप्त करते है। पौधों को इन तत्वों की आवश्यकता फसल की किस्म तथा उससे प्राप्त की जाने वाली उपज के स्तर पर निर्भर करती है। उपज प्राप्ति का लक्ष्य जितना बड़ा होगा इन तत्वों की उतनी ही अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है। मृदा में इन तत्वों की मात्रा सही अनुपात में होने पर ही अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। मृदा की उर्वरा शक्ति के प्रबंधन के लिए उपलब्ध पोषक तत्वों के प्रकार एवं मात्रा की जानकारी होना आवश्यक है। फसल विशेष के लिए उपलब्ध तत्वों की आवश्यक मात्रा का प्रबंधन इस तरह से होना चाहिए कि मृदा की उर्वरा शक्ति का ह्रास न हों, साथ ही पौधों को सन्तुलित पोषण प्राप्त हो और उर्वरकों के असन्तुलित प्रयोग से मृदा, पौधों एवं पर्यावरण पर होने वाले दुष्प्रभावों को कम किया जा सके। इसी प्रकार सघन खेती में अधिक उपज वाली संकर किस्मों के लिए अधिक सिंचाई एवं उर्वरकों की आवश्यकता होती है अगर फसलो के पोषक तत्वों की पूर्ति आवश्यकता अनुसार नहीं की तो पौधे अपनी पूर्ति मृदा से करते है जिससे भूमि में उपलब्ध तत्वों की कमी हो जाती है। जब तक हमें मृदा की समस्याओं एवं उसमें जैविक कार्बन एवं पोषक तत्वों के बारे में उचित जानकारी नहीं हो तब तक उसका उचित प्रबंधन नहीं किया जा सकता है। मृदा परीक्षण में निम्न पोषक तत्वों की जाँच की जाती है।

मृदा परीक्षण के मापदंड

मापदण्ड	मान	विवरण
पी.एच.	6.5—7.5 8.5 से अधिक 6.5 से कम	सामान्य मृदा क्षारीय मृदा अम्लीय मृदा
विद्युत चालकता	0—2 डेसी साइमन प्रति मीटर 2 और उससे अधिक	सामान्य लवणीय मृदा

मृदा पीएच व विद्युत चालकता के अधार पर मृदा अम्लीय, क्षारीय व लवणीय समस्या की जानकारी होती है अम्लीय मृदा की समस्या मुख्यत अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में होती है तथा इसके सुधार हेतु प्रयोगशाला में चूने की आवश्यकता परीक्षण के आधार पर चूने का उपयोग किया जाता है। क्षारीय एवं लवणीय मृदा की समस्या प्रायः शुष्क जलवायु व ख़राब जल गुणवता वाले क्षेत्रों में पायी जाती हैं। क्षारीय मृदा के सुधार हेतु प्रयोगशाला में जिप्सम की आवश्यकता परीक्षण के आधार पर जिप्सम की मात्रा का उपयोग वर्षा या सिंचाई से पूर्व अच्छी प्रकार से मृदा में मिलाकर किया जाता है। लवणीय मृदा में घुलनशील लवणों की अधिक मात्रा के कारण बीज का अंकुरण और विकास पर बुरा प्रभाव होता है। लवणीय मृदा के सुधार हेतु लवण को खुर्च कर या अच्छे गुणवता वाले जल में घोलकर निछालन (लिचिंग) द्वारा कम किया जाता है इसके साथ—साथ अच्छी गुणवता वाले जैविक खादों का प्रयोग करना चाहिए।

मृदा में उपलब्ध मुख्य पोषक तत्वों की व्याख्या

मृदा परीक्षण करवाने पर प्राप्त रिपोर्ट के आधार पर उर्वरक डालने की व्याख्या उपरोक्त सारणी में की गई हैं। उर्वरक की मात्रा राज्य व फसलों के अनुसार अलग अलग सिफारिश की गई है उदाहरण के लिए किसान की मृदा रिपोर्ट में नत्रजन की मात्रा 140 किलो प्रति हेक्टर से कम है और उसको गेहूं के लिए यदि 120 किलो नत्रजन डालने की सिफारिश की गई है तो उसे नत्रजन की मात्रा 50% बढ़ाकर अर्थात 180 किलो प्रति हैक्टर कुल नत्रजन की मात्रा गेहूं के लिए डालें।

पोषक तत्व	बहुत निम्न	निम्न	मध्यम	उच्च	अत्यधिक
जैविक कार्बन (%)	0.25 से कम	0.25—0.50	0.50—0.75	0.75—1.0	1.0 से अधिक
उपलब्ध नत्रजन (kg@ha)	140 से कम	140—280	280 से 560	560—700	700 से अधिक
उपलब्ध फॉस्फोरस (kg P@ha)	5 से कम	5—10	10 से 25	25—30	30 से अधिक
उपलब्ध पोटाश (kg K@ha)	60 से कम	60—120	120 से 280	280—340	340 से अधिक
क्षेत्र अनुसार उर्वरको की सिफ़ारिश मात्रा	50% बढ़ाकर डाले	25% बढ़ाकर डाले	सामान्य सिफ़ारिश डाले	25% कम डाले	50% कम डाले

संरक्षण कृषि

संरक्षण कृषि में भूमि की सतह पर फसल अवशेषों को रखते हुए भूमि को बिना या कम से कम जुताई करके फसलों को उगाना तथा फसल चक्र में दलहनी फसलो का समावेश करके खेती की जाती है।

संरक्षण खेती के सिद्धांत

1. फसलें उगाने की ऐसी प्रणालियां विकसित करना और उन्हें बढ़ावा देना, जिनके कारण मृदा में सबसे कम व्यवधान होता है जैसेः न्यूनतम एवं शून्य जुताई।
2. मृदा की सतह पर फसल अवशेषों को छोड़ने तथा आवरण फसलें उगाने आदि विधियों को अपनाकर मृदा की ऊपरी सतह को ढक कर रखना, अर्थात फसल पलवार का प्रयोग।

3. फसल चक्र, अंतःखेती, कृषि वानिकी आदि के माध्यम से विविधीकृत फसल को बढ़ावा देना अर्थात फसल विविधीकरण।

संरक्षण खेती में मृदा में कम से कम यांत्रिक छेड़छाड़ करने, मृदा सतह के जैविक पलवार से ढके रहने तथा फसल चक्र अपनाने से मृदा की भौतिक, रासायनिक तथा जैविक गुणवत्ता में लगातार वृद्धि होती है। इसके कारण मृदा का जल तथा वायु संचार बढ़ जाता है, जबकि संरक्षण खेती में मृदा सतह पर फसल अवशेषों की परत होने के कारण मृदा कणों को बांधे रखने की क्षमता बढ़ जाती है, जिससे जल तथा वायुकटाव की तीव्रता कम हो जाती है। इसके अतिरिक्त संरक्षण खेती में उगाई जाने वाली दलहनी फसलें भी मृदा को जल तथा वायुकटाव से संरक्षण प्रदान करती है। इसलिए संरक्षण खेती मृदा स्वास्थ्य सुधार में बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है।

किसान रासायनिक उर्वरकों के संतुलित प्रयोग के साथ ही जैविक खादों एवं जैव उर्वरकों का यथासम्भव इस्तेमाल से कृषि की लागत को कम करके अधिक उत्पादन लेने व मृदा स्वास्थ्य को बनाये रखने व सुधार के लिए उपरोक्त सभी तकनिकीयों का प्रयोग कर सकते है।

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन

मृदा उर्वरता में वृद्धि बनाए रखने के लिये पोषक तत्वों के सभी उपलब्ध स्रोतों से मृदा में पोषक तत्वों का इस प्रकार सामंजस्य रखा जाता हैं, जिससे मृदा की भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणवत्ता में सुधार के साथ साथ लगातार उच्च आर्थिक उत्पादन लिया जा सकता हैं। कार्बनिक खादें वर्तमान फसल को तो लाभ पहुँचाती ही हैं साथ ही आगामी फसल को भी अवशोषित प्रभाव द्वारा लाभ पहुँचाती हैं जैसा की एक टन गोबर की खाद से लगभग 12 पोषक तत्व नत्रजन, फास्फोरस, तथा पोटाश होते हैं।

जैविक खादः जैविक खाद का उपयोग किसान प्राचीनकाल से करते आ रहे हैं परन्तु अधिक पैदावार देने वाली फसल की किस्म के लिए अधिक पोषक तत्वों की आवश्यकता होने के कारण जैविक खाद पर निर्भर न रहकर रसायनिक उर्वरकों को मुख्य रूप से प्रयोग करते हैं। रासायनिक उर्वरकों के लगातार अधिक मात्रा में प्रयोग करने से मृदा व पर्यावरण के लिए हानिकारक होता है। जैविक खाद न केवल पोषक तत्वों की पूर्ति करती है अपितु मृदा की भौतिक, जैविक तथा रासायनिक गुणवता को भी बढ़ाती है। भारत में गोबर की खाद, विभिन्न प्रकार की कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, बायोगैस स्लरी, खलियां, मुर्गी, भेड़ अथवा बकरी से प्राप्त खाद एवं हरी खाद मुख्य रुप से प्रयोग में आने वाले जैविक खाद के स्रोत हैं। खेत में हरी खाद के लिए मुख्य रूप से दलहनी फसलें उगाकर मृदा की उर्वरता में सुधार किया जा सकता है। हरी खाद की फसलों में ढ़ैंचा, सन, लोबिया तथा दूसरी दलहनी फसलें मुख्य हैं।

फसल अवशेषः गेहूं के अवशेष कपास के डंठल, गन्ने की सूखी पत्तियाँ तथा धान का भूसा इत्यादि की बड़ी मात्रा उपलब्ध है। अनुसंधानों से यह सिद्ध हुआ कि गेहूँ व धान का भूसा के साथ 25 किग्रा. नाइट्रोजन/हेक्टेयर या फली वाली फसल का अवशेष मृदा में डालने से मृदा की उर्वरता पर अवश्य ही सकारात्मक प्रभाव होता है।

प्रेसमडः भारत में वर्ष भर में भारी मात्रा में प्रेसमड, शीरा एवं बैगस (खोई) का चीनी मिलों से उत्पादित होता है जिसमें कि लोहा, जिंक, कैल्शियम तथा मैंग्नीज उपस्थित होता है। प्रेसमड का सूक्ष्म जीव से विघटन करने के पश्चात् खेत में प्रयोग करने से मृदा के रासायनिक, भौतिक व जैविक गुणों में सुधार होता है प्रेसमड व फ्लाई एश को भूमि सुधारक के रुप में प्रयोग करके समस्याग्रस्त एवं सामान्य मृदाओं की उर्वरता में भी सुधार किया जा सकता है।

जैव–उर्वरकः इनका प्रयोग करने से वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण, मृदा में उपस्थित फॉस्फोरस व अन्य पोषक तत्वों को पौधों के लिए उपलब्धता बढ़ाकर मृदा की उर्वरता एवं स्वास्थ्य को ठीक रखते है उदाहरण के लिए दलहनी फसलों में राइजोबियम का सबसे अधिक प्रयोग किया जाता है इसी प्रकार फॉस्फोरस, पोटाश एवं सूक्ष्म तत्वों की उपलब्धता बढ़ाने के लिए जैविक उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है। जैव उर्वरकों के प्रयोग से रासायनिक उर्वरकों की मात्रा में कटोती करते हुये उचित उपज व लाभ ले सकते है इसके साथ साथ मृदा स्वास्थ्य को भी उत्तम रखा जा सकता है।

रासायनिक उर्वरकः आधुनिक कृषि में खाद्यन्न उत्पादन के लिए रासायनिक उर्वरक एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। रसायनिक उर्वरकों का मृदा उर्वरता पर अनुकूल प्रभाव इस संदर्भ में लिया जा सकता है कि इनके प्रयोग से मरुस्थलीकरण कम हुआ जैव विविद्यता बढ़ी, पोषक तत्वों के दोहन में कमी हुयी है। फसलों में रासायनिक उवर्रकों का प्रयोग वैज्ञानिक तरीके से करना चाहिए। नत्रजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम के लिए क्रमशः युरिया, डी.ए.पी. और म्युरेट आफ पोटाश उर्वरक का प्रयोग किया जाता है। गंधक के प्रमुख स्रोत गंधक तत्व, जिप्सम एवं आयरन पाइराइटस है जिंक व आयरन की कमी को दूर करने के लिए क्रमशः जिंक सल्फेट, आयरन सल्फेट का प्रयोग किया जाता है। फॉस्फोरस एवं पोटाशयुक्त उर्वरकों का प्रयोग प्रायः बुआई के समय तथा नत्रजन युक्त उर्वरकों (युरिया/अमोनियम सल्फेट) खाद्यान्न फसलों में, एक बार की बजाय दो या तीन बार करना अधिक उपयोगी रहता है। अगर मृदा में नत्रजन की मात्रा मध्य या अधिक हो तो बुवाई के समय यूरिया का प्रयोग न करके यूरिया उर्वरक की मात्रा कम की जा सकती है बल्की खड़ी फसल में प्रयोग करें जिससे अधिक उपज व पर्यावरण सुरक्षित रहेगा।

क्षेत्र–विशिष्ट पोषक तत्व प्रबंधन

क्षेत्र–विशिष्ट पोषक तत्व प्रबंधन का उद्‌देश्य आवश्यकता के अनुसार उचित पोषक तत्व एवं फसल प्रबंधन से अधिक उपज का लाभ प्राप्त करना है जिसमें एक फसल या किस्म विशेष के लिए क्षेत्र और मौसम–विशिष्ट आवश्यकता के अनुरूप स्थानीय रूप से अनुकूलित पोषक तत्व प्रबंधन किया जाता है मृदा प्रबंधन में स्थानीय संसाधन का समुचित उपयोग करने के लिए निम्नलिखित आवश्यक बातों को अपनाया जाता हैः

1. सभी सुलभ पोषक तत्वों के स्रोतों का कुशल उपयोग करना जिसमें जैव खादें, फसल अवशेष, तथा अकार्बनिक उर्वरक सुलभता एवं कीमत के अनुसार सम्मिलित हो।
2. पत्ती रंग पट्टिका (LCC) का उपयोग करते हुए पादप आवश्यकता आधारित नाइट्रोजन प्रबंधन रणनीति का अनुपालन।
3. पोषक तत्व वंचित क्यारी के उपयोग द्वारा मृदा की नैसर्गिक पोषक तत्व आपूर्ति (विशेषतः फॉस्फोरस तथा पोटैशियम) का निर्धारण।
4. फसल को पोषक तत्वों (मुख्य तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों) की संतुलित आपूर्ति सुनिश्चित करना।
5. मृदा पोषक तत्वों के भंडार का ह्रास रोकने हेतु दाना तथा भूसा के द्वारा निष्कासित पोषक तत्वों (विशेषतः फॉस्फोरस तथा पोटैशियम) को प्रतिस्थापित करना।
6. उर्वरक स्रोतों के न्यूनतम कीमत वाला संयोजन का चयन करना।

उच्च गुणवत्ता वाला बीज तथा उपयुक्त पौध–सघनता का उपयोग, समेकित नाशीजीव प्रबंधन तथा उत्तम फसल प्रबंधन तांकि क्षेत्र–विशिष्ट पोषक तत्व प्रबंधन का पूरा लाभ प्राप्त हो सके, तथा स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप क्षेत्र–विशिष्ट पोषक तत्व प्रबंधन करके फसल की उत्पादकता व आर्थिक लाभ को बढ़ाया जा सकता है अभी तक के अनुसंधान से यह सुनिश्चत हो गया है की हम क्षेत्र–विशिष्ट पोषक तत्व प्रबंधन से मृदा स्वास्थ्य को सुधार के साथ–साथ पर्यावरण व भूमिगत जल प्रदूषण को भी रोका जा सकता है।

सब्जियों में पादप परजीवी सूत्रकृमि की समस्या एवं नियंत्रण

चंद्रमणि वाघमारे, विकास बामल एवं रशीद परवेज़
भा.कृ.अनु.प–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110 012

खेतों में अंधाधुंध रासायनिक तत्वों के इस्तेमाल से जहां भूमि, जल, पर्यावरण, खाद्य पदार्थ के खराब होने के साथ–साथ मानव स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है, वहीं भूमि में सूत्रकृमि या नेमैटोड की समस्या भी बढ़ती है। भूमि में निमेटोड की समस्या किसानों के लिए एक बहुत बड़ी समस्या है, जिससे भूमि की उपजाऊ क्षमता तो कम होती ही है, साथ ही फसल उत्पादन पर भी ज्यादा असर पड़ता है। जिससे किसानों को काफी हद तक नुकसान झेलना पड़ता है, लेकिन किसान कुछ उपायों को अपनाकर निमेटोड को नियंत्रण कर सकते हैं। विशेषज्ञों के अनुसार सूत्रकृमि विभिन्न प्रकार की सब्जियों मे रोग उत्पन्न करता है, जिसकी पहचान आम किसान नहीं कर पाते एवं अन्य रोगनाशी रसायनों का छिड़काव कर रोकथाम करने का प्रयास करते हैं, जिससे उनका श्रम, पैसा समय बर्बाद होता है एवं सफलता भी नहीं मिलती। इसलिए इन सूत्रकृमि की पहचान करना जरूरी है एवं इनसे होने वाले रोगों की पहचान कर इन्हें विभिन्न विधियों द्वारा नियंत्रण किया जा सकता है।

क्या होते हैं सूत्रकृमि?

सूत्रकृमि सूक्ष्म, कृमि के समान जीव हैं जो पतले धागे के समान होते हैं, जिन्हें सूक्ष्मदर्शी से आसानी से देखा जा सकता है। इनका शरीर लंबा, बेलनाकार पूरा शरीर बिना खंडों का होता है। मादा सूत्रकृमि गोलाकार नर सर्पिलाकार आकृति के होते हैं। इनका आकार 0.2 मिमी. –10 मिमी. तक हो सकता है। सूत्रकृमियों में प्रमुख रूप से फसल परजीवी सूत्रकृमि है जो कि मृदा में या पौधे की उत्तको में रहते हैं। इनमें मुख्य रूप से जड़ गांठ सूत्रकृमियों का विभिन्न फसलों पर प्रकोप ज्यादातर देखा गया है।

विभिन्न विधियों से की जा सकती है रोकथाम

सब्जियों में सूत्रकृमि के कारगर नियंत्रण के लिये सबसे पहले इनकी पहचान, रोगजनक, रोग के लक्षण आदि की पहचान होना आति आवश्यक है। जिससे इसकी रोकथाम करने के विभिन्न उपाय अपनाने में आसानी हो सके और वर्तमान में बढ़ते हुये रासायनिक तत्वों के प्रयोगों के कारण भूमि, जल, पर्यावरण, खाद्य पदार्थ के खराब होने और मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले विपरीत असर को देखते हुये सूत्रकृमि नियंत्रण के लिये समन्वित रोग प्रबंधन का तरीका अपनाना चाहिये।

किसान सब्जियों से अधिक लाभ प्राप्त करने के लिये इनकी सघन खेती करते है, जिससे सूत्रकृमियों को आसानी से पोषण मिल जाता है, जिससे इनकी संख्या कई गुना बढ़ जाती है। सूत्रकृमियों से हानि मिट्टी में उपस्थित इनकी संख्या, बोई जाने वाली इनकी पोषक फसल आदि पर निर्भर करता है। सामान्य अवस्था मे 20–40 प्रतिशत तक नुकसान होता है एवं रोग की अधिकता होने पर 70–80 प्रतिशत तक भी हानि हो सकती है।

जड़गांठ सूत्रकृमि रोगः विशेषज्ञों के अनुसार यह रोग मुख्यत कददू वर्गीय सब्जियों, चुकंदर, गाजर, टमाटर, बैगन, मिर्च, भिण्डी, प्याज, चौलाई, शकरकंद आदि सब्जी फसलों को नुकसान पहुंचाता है। जिसमें *मेलाइडोगायनी जावानिका, मेलाइडोगायनी इनकोगनिटा, मेलाइडोगायनी अरनेरिया* रोगजनक प्रजातियां शामिल हैं।

वहीं आलू का सिस्ट सूत्रकृमि को गोल्डन निमेटोड के नाम से भी जाना जाता है। जिसमें *ग्लोबोडेरा रोस्टोचाइनेनिसस ग्लोबोडेरा पेलीडा* आदि प्रजातियां शामिल हैं।

अगर बात की जाए प्याज का तना बल्ब सूत्रकृमि की तो यह मुख्य रूप से प्याज लहसुन में नुकसान पहुंचाता है। जिसमें *डिटिलेनिचस डिप्सेसी* प्रजातियां शामिल हैं।

सब्जियों में सूत्रकृमि रोग के लक्षण

- रोगग्रस्त पौधों की पत्तियां पीली पड़ जाती हैं, सब्जियों में सूत्रकृमि ग्रसित पौधा मुरझा जाता है तथा पौधा बौना रह जाता है।
- पौधों को उखाड़कर देखने पर यह दिखता है, कि जड़े सीधी न होकर आपस मे गुच्छा बना लेती है, जड़ों पर गांठें बनकर फूल जाती हैं।

जड़ गांठ से प्रभावित टमाटर के पौधे

जड़ गांठ से प्रभावित मिर्च के पौधे

गांठ से ग्रसित भिंडी के पौधे

रिब्ड लौकी की जड़

गाजर को नेमाटोड नुकसान

➢ पौधों में फूल व फल देरी से लगते हैं व झड़ने लगते हैं, फलों का आकार छोटा हो जाता है व उसकी गुणवत्ता कम हो जाती है।

सब्जियों में सूत्रकृमि का प्रबंधन

सब्जियों में सूत्रकृमियों की रोकथाम के लिये निम्न उपाय अपनाये जा सकते है, जैसे–

- **फसल चक्रः** सूत्रकृमियों की कई प्रजातियां जैसे– *ग्लोबोडेरा, मेलाइडोगायनी, हेटरोडेरा* इत्यादि मिटटी में लंबे समय तक सक्रिय नहीं रहते इसलिए फसल चक्र अपनाकर इनकी रोकथाम की जा सकती है।

जिन खेतों में जड़ गांठ रोग का प्रकोप हो, वहां ऐसी सब्जियों या अन्य फसलों का चुनाव करें, जिनमें यह रोग नही लगता जैसे– राजमा, मटर, मक्का, गेहूं, ग्वार, पालक, सलाद आदि।

- **स्वच्छ कृषि औजारों का प्रयोगः** सब्जियों में सूत्रकृमि रोकथाम हेतु एक खेत दूसरे खेतों में कृषि औजारों के प्रयोग से पहले इन्हें अच्छी तरह से साफ कर लेना चाहिये। ताकि यदि एक खेत में सूत्रकृमियों की उपस्थिति है, तो वे अन्य खेतों में खेती औजारों के माध्यम से न जाएँ।
- **रोग रहित पौध का चुनावः** सब्जियों में सूत्रकृमि रोकथाम हेतु स्वस्थ, साफ और रोगरहित पौध का चुनाव करना चाहिये।
- **कार्बनिक खाद का प्रयोगः** कार्बनिक खादें सूत्रकृमियों के प्रति प्रतिरोध उत्पन्न करने वाले कुछ ऐसे कवक तथा बैक्टिरिया को बढ़ावा देती है, जिससे इनका संक्रमण कम हो जाता है। खादों को भूमि की जुताई करते समय या बीज बोने या पौध लगाने के 20 से 25 दिन पहले डालना चाहिये। इनमें मुख्यतः नीम, सरसों, महुआ, अरण्डी, मूंगफली आदि की खली 25 से 30 किंवटल प्रति हेक्टेयर की दर से डालनी चाहिये।
- **शत्रु फसलें व रक्षक फसलें:** कुछ फसलें जैसे शतावर, क्रिस्टेयी क्रोटोलेरिया जैसी जड़ गांठ सूत्रकृमि की संख्या को कम करती है। सफेद सरसों व आलू सिस्ट सूत्रकृमि को रोकते है। ये फसलें शत्रु फसलें कहलाती है। इनके अलावा कुछ ऐसी फसलें है, जिनके जडों से ऐसे रासायनिक द्रव्य निकलते हैं जो सूत्रकृमियों के लिये विष का काम करते है, जैसे– गेंदा, सेवंती इत्यादि इन्हे अंर्तवर्तीय फसलों के रूप में मुख्य फसलों के बीच मे या मुख्य फसल के चारो तरफ 2 से 3 कतारों में लगाना चाहिये।
- **रोग ग्रस्त पौधों को नष्ट करकेः** यदि आरंभ में सूत्रकृमि का प्रकोप बहुत कम है, तो रोगग्रस्त पौधों को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिये इससे रोग का प्रकोप कम हो जायेगा।
- **ग्रीष्म कालीन गहरी जुताईः** मई से जून के महीने में खेतों की मिट्टी पलट हल से 15 से 30 सेंटीमीटर गहरी जुताई करके छोड़ दें, जिससे सूत्रकृमियों के अण्डे व डिंभक उपरी सतह पर आ जाते हैं, जो सूर्य ताप तथा चिडियां आदि द्वारा नष्ट हो जाते हैं, जिससे सूत्रकृमि के प्रकोप को काफी हद तक कम किया जा सकता है।
- **मृदा सौर निर्जमीकरण द्वाराः** यह एक आसान, सुरक्षित व प्रभावशाली विधि है, जिसके द्वारा सूत्रकृमियों के साथ–साथ विभिन्न कीटों, रोगजनक और खरपतवारों की रोकथाम भी हो जाती है। इस विधि में गर्मियों मई से जून में खेत की सिंचाई करके 15 से 30 सेंटीमीटर गहराई तक गहरी जुताई करके उसे 4 से 5 सप्ताह तक पालीथीन शीट से ढ़क दिया जाता है, जिससे मिट्टी में उच्च तापक्रम द्वारा सूत्रकृमि नष्ट हो जाते हैं।
- **खरपतवार नियंत्रणः** खेतों में उगने वाले कई प्रकार के खरपतवारों पर सूत्रकृमि पनाह लेकर पोषण प्राप्त करके अपना जीवन चक्र पूरा कर लेते हैं और आने वाली फसल पर आक्रमण करके हानि पहुंचाते हैं। इसलिए समय–समय पर खरपतवारों का नियंत्रण करते रहें।
- **गर्म जल उपचारः** सब्जियों में सूत्रकृमि रोकथाम हेतु 46 डिग्री सेलियस तापक्रम जल द्वारा आलू और प्याज के कंद–बीजों को 1 घण्टे तक उपचारित करने से सूत्रकृमि नष्ट हो जाते हैं।
- **आच्छादित फसलों द्वाराः** कुछ आच्छादित फसलें जैसे– सनई, दूब घास, वेलवेट बिन आदि कुछ ऐसे हैं जिन्हें मुख्य फसल के पहले या बाद में उगाकर सामान्य रूप से जड़ गांठ सूत्रकृमि की रोकथाम की जा सकती है।
- **रोग प्रतिरोधी किस्मों का चयन करकेः** सूत्रकृमियों के प्रबंधन का यह सबसे सरल, सस्ता व प्रभावकारी उपाय है। किसान बन्धु सूत्रकृमि रोग रोधी किस्में उगा कर भी इनपर नियंत्रण पा सकते है, यहाँ टमाटर और मिर्च की सूत्रकृमि रोग रोधी किस्मों का उदाहरण है, जैसे– टमाटर की कल्याणपुर–1,2,3 जो की रेनीफार्म

सूत्रकृमि रोधी किस्में है। मिर्च की एन पी– 46–ए, पूसा ज्वाला, मोहिनी जो जड़ गांठ सूत्रकृमि रोधी किस्में है।

- **पौध संगरोधः** एक देश से दूसरे देशों में सूत्रकृमि के प्रसार को रोकने के लिये पादप संगरोध नियमों का बहुत महत्व है, उदाहरण के लिये आलू का सिस्ट सूत्रकृमि पर ये नियम लागू है।

रासायनिक नियंत्रण

- कार्बोफ्यूरान या फोरेट 2 किलोग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टर भूमि में मिलायें या बीज को उपचारित करें या पौध को कार्बोसल्फॉन 25 ई सी, 500 पी पी एम से 1 घंटे तक उपचारित करके लगायें।
- सब्जियों में सूत्रकृमि रोकथाम हेतु कुछ दानेदार रसायन जैसे– एल्डीकार्ब 11 किलोग्राम हेक्टर की दर से मिटटी मे मिलाये।
- डाईक्लोरोप्रोपीन या ऑक्सामिल को 5 से 10 किंवटल प्रति हेक्टर या निमागान 120 किलोग्राम हेक्टर की दर से भूमि मे मिलाना चाहिये।
- सब्जियों में सूत्रकृमि रोकथाम हेतु पौध को कार्बोसल्फान 1 ग्राम प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर आधा घंटा उपचारित करके लगाये।

समन्वित रोग प्रबंधन

समन्वित रोग प्रबंधन से भी सूत्रकृमियों पर रोक लगाई जा सकती है। इन रोग प्रबंधन की विभिन्न विधियों में से किसी एक विधि द्वारा सूत्रकृमियों का पूरी तरह रोकथाम नहीं किया जा सकता। अतः दो या दो से अधिक विधियों का समावेश करके समन्वित रोग प्रबंधन द्वारा सूत्रकृमियों की रोकथाम की जा सकती है।

1. **फसल चक्र (Crop Rotation):**
   - एक ही स्थान पर एक ही प्रकार की फसल बार–बार न लें।
   - गैर–आतिथ्य (non-host) फसलों जैसे जौ, मक्का, गेंहू आदि को फसल चक्र में शामिल करें।
   - इससे सूत्रकृमियों की संख्या घटती है।
2. **अंतर फसलें (Intercropping):**
   - गेंदा (Marigold) जैसे सूत्रकृमि–विरोधी पौधों के साथ सब्ज़ियों की खेती करें।
   - गेंदा की जड़ें अल्फा–टेरथिएन (lpha & terthienyl) नामक यौगिक छोड़ती हैं जो सूत्रकृमियों को मारता है।
3. **जैविक नियंत्रण (Biological Control):**
   - लाभकारी नेमाटोड (जैसे *Steinernema* spp- या *Heterorhabditis* spp-) का प्रयोग करें।
   - कवक जैसे *Purpureocillium lilacinus* और बैक्टीरिया जैसे *Pseudomonas fluorescens* सूत्रकृमियों के अंडों व लार्वा पर हमला करते हैं।
4. **मृदा सौरीकरण (Soil Solarization):**
   - गर्मियों में खेत की मिट्टी को पारदर्शी पॉलीथिन से 4–6 सप्ताह तक ढँक दें।
   - इससे मिट्टी का तापमान बढ़ता है और सूत्रकृमि मर जाते हैं।
5. **जैविक खाद और कार्बनिक संशोधन (Organic Amendments):**
   - नीम की खली, अरंडी की खली, गोबर की खाद और कम्पोस्ट का प्रयोग करें।
   - इससे लाभकारी सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ती है जो सूत्रकृमियों को नियंत्रित करते हैं।
6. **प्रतिरोधी किस्मों का चयन (Resistant Varieties):**
   - सूत्रकृमियों के प्रति सहनशील या प्रतिरोधी सब्ज़ी किस्मों (जैसे टमाटर, बैंगन की विशेष किस्में) का उपयोग करें।
7. **भौतिक नियंत्रण (Physical Control):**
   - संक्रमित पौधों को उखाड़कर जला दें।
   - खेत की जुताई गहरी करें ताकि सूत्रकृमियों के अंडे और लार्वा सतह पर आ जाएं और मर जाएं।

8. जैव कीटनाशी और निषिद्ध रसायन से बचाव (Avoid Harmful Chemicals):

- रासायनिक नेमाटोसाइड का सीमित और विवेकपूर्ण उपयोग करें या पूरी तरह त्यागें।
- पर्यावरण के अनुकूल जैविक विधियाँ अपनाएँ।

9. बीज और नर्सरी प्रबंधनः

- स्वस्थ और प्रमाणित बीजों का प्रयोग करें।
- नर्सरी मिट्टी को जैविक विधियों से उपचारित करें।

10. समय पर निराई–गुड़ाईः

- खरपतवारों की समय–समय पर सफाई करें क्योंकि ये सूत्रकृमियों के वैकल्पिक पोषक हो सकते हैं।

अंत में यदि इन सबसे रोकथाम नहीं हो तब रसायनों का प्रयोग करें।

वर्तमान में बढ़ते हुये रासायनिक तत्वों के प्रयोगों के कारण भूमि, जल, पर्यावरण, खाद्य पदार्थ के खराब होने और मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले विपरीत असर को देखते हुये सूत्रकृमि नियंत्रण के लिये समन्वित रोग प्रबंधन का तरीका अपनाना चाहिये।

लघु एवं सीमान्त कृषकों की अधिक आय के लिए समन्वित कृषि प्रणाली मॉडल

राजीव कु. सिंह, एस. एस. राठौर, प्रवीण कु. उपाध्याय, कपिला शेखावत एवं आदित्य सिंह
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110 012

समन्वित कृषि प्रणाली से समग्र दृष्टिकोंण से किसानों, खासतौर पर छोटे काश्तकारों को अपने घर और बाजार के लिये कई तरह की वस्तुओं के उत्पादन का पर्याप्त अवसर तो प्राप्त होता ही है साथ ही साथ कृषि के क्षेत्र में रोजगार के अवसर बढ़ाने, परिवार के लिये सन्तुलित पौष्टिक आहार जुटाने, पूरे साल आमदनी व रोजगार का इन्तजाम करने तथा मौसम और बाजार सम्बन्धी जोखिम कम करने में भी मदद मिलती है। इससे खेती में काम आने वाली वस्तुओं के लिये किसानों की बाजार पर निर्भरता भी कम होती है। लागत ज्यादा एवं पैदावार मे बढ़ोतरी न होने से किसानों की शुद्व आय मे निरंतर कमी होती जा रही है साथ में मृदा का स्वास्थ्य भी दिन प्रति दिन खराब होता जा रहा है। एक तरफ जहां लघु व सीमान्त किसानों की संख्या बढ़ती जा रही है वहीं प्राकृतिक संसाधनों की कमी होती जा रही है। ऐसी स्थिति में सीमान्त एवं लघु खेती को किस तरह लाभकारी व्यवसाय बनाकर कृषक परिवार की जीविका निश्चित किया जाये व उनके जीवन स्तर को ऊपर उठाया जायें एक बहुत ही महत्वपूर्ण विषय है। इसी श्रृखला में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा उत्तर भारतीय परिस्थितियों में रहने वाले लघु एवं सीमान्त कृषकों हेतु 1.0 हेक्टेयर सिंचित भूमि पर एक समन्वित कृषि प्रणाली मॉडल विकसित किया गया है। समन्वित कृषि प्रणाली प्रक्रिया का मुख्य अभिप्राय है कि किसान की फार्म प्रक्षेत्र पर उपलब्ध संसाधनों, आर्थिक स्थिति एवं परिवार के मूलभूत खाद्यान्न एवं हरे चारे आदि की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विभिन्न उद्ययमों जैसे फसल उत्पादन, बागवानी, कृषि–वानिकी, पशुपालन (दुग्ध उत्पादन, मुर्गी पालन, बत्तख पालन), मधुमक्खी पालन, मछली पालन व मशरूम आदि का समन्वय बनाकर सालभर आय अर्जित करना और साथ में उनके सामाजिक व आर्थिक स्तर को ऊँचा बनाना है। "समन्वित कृषि प्रणाली कृषि उद्यमों के उचित संयोजन का प्रतिनिधित्व करती है, जैसे–फसल प्रणाली, वानिकी, डेयरी पालन, मत्स्य पालन, मुर्गी पालन, बतख पालन और किसानों को लाभप्रदता के लिए उपलब्ध कराने के साधन उपलब्ध हैं।

1. समन्वित कृषि प्रणाली की धारणाः प्रायः देखा गया है की अधिकतर किसान एक ही प्रकार की फसल प्रणाली का लम्बे समय तक प्रयोग करते रहते हैं जिसके कारण कई प्रकार की समस्याएं उत्पन्न होने लगती है! उदाहरणार्थ पानी व मृदा की उर्वरा शक्ति में कमी होना, फसल उत्पादन में स्थिरता, सीमान्त व लघु किसानों के फसल उत्पादन में अधिक लागत तथा खेती से कम लाभ इत्यादि समस्यांए बढ़ रही हैं। उर्वरको एवं रसायनों के अधिकाधिक प्रयोग के कारण वातावरण प्रदूषण बढ़ रहा है। ऐसी परिस्थिति में लघु एवं सीमान्त कृषि की आजीविका सुनिश्चित करना एक कठिन चुनौती है। जिन क्षेत्रों मे वर्षा आधारित खेती ही संभव है वहां नमी की कमी तथा सूखे की स्थिति में फसल उत्पादन या तो बिलकुल नहीं होता है या बहुत कम होता है। अतः एक ही प्रकार की फसलें उगाना हमेशा जोखिम भरा रहता है जिसके कारण विशेषकर सीमान्त एवं लघु किसानो की अपनी घरेलु आवश्यकतायें पूर्ण करना कठिन हो रहा है। ऐसे में समन्वित कृषि प्रणाली द्वारा किसानों की आजीविका को सुनिश्चित किया जा सकता है। समन्वित कृषि प्रणाली के अंतर्गत अत्यधिक फसल उत्पादन के अलावा अन्य कृषि उद्यमों का संयोजन कर न केवल अधिक लाभ व टिकाऊ उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है बल्कि मौसम की विषमता से भी सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है उससे संसाधनों का संतुलित प्रयोग कर उनकी उपयोग क्षमता में वृद्धि तथा घरेलु आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ–साथ सकल आमदनी को बढ़ाया जा सकता है व पूरे वर्ष रोजगार भी प्राप्त किया जा सकता है।

2. समन्वित कृषि प्रणाली के उद्देश्य

- समन्वित कृषि प्रणाली द्वारा विभिन्न उद्यमों जैसे फसलें एवं फलोत्पादन, दुग्ध पालन, मुर्गी पालन, मधुमक्खी पालन, मछली पालन मशरूम उत्पादन, वर्मीकम्पोस्ट एवं चारदीवारी पर बहुउदेशीय वनस्पति रोपण आदि के विवेकपूर्णा संयोंजन से सालभर आय अर्जित कर सकते है।
- इससे देश के 86% लघु व सीमान्त किसानों की आजीविका में सुधार लाया जा सकता है।
- यह मॉडल किसानों की आय को आसानी से दोगुना करने में सक्षम है।

3. समन्वित कृषि प्रणाली के प्रमुख अवयव या घटक

1. **फसल उत्पादनः** समन्वित कृषि प्रणाली के अन्तर्गत 1 हेक्टेयर क्षेत्रफल में 0.7 हेक्टेयर में फसल उत्पादन कर सकते हैं जैसे– बेबीकार्न–बरसीम–बेबीकार्न, मक्का–सरसों–सूरजमुखी, मक्का–सब्जी मटर–भिंडी, मल्टी कट ज्वार–आलू–प्याज, मक्का–गेहूँ–लोबिया, धान–गेहूँ–लोबिया, लौकी–गेंदा–मल्टी कट ज्वार, अरहर–गेहूँ–बेबीकार्न एवं बैगन–रैटुन बैगन–लोबिया (दोहरा उद्देश्य) इत्यादि फसलों का उत्पादन कर सकते है इस प्रणाली के अन्तर्गत फसल उत्पादन में किसान की कम लागत लगती है क्योंकि ज्यादा से ज्यादा उत्पादक सामग्री जैसे गोबर की खाद, वर्मी कम्पोस्ट एवं बायो गैस सलरी से ही पूर्ति हो जाती है। किसान को फसल उत्पादन के लिए एक अच्छा फसल चक्र अपनाना चाहिए।

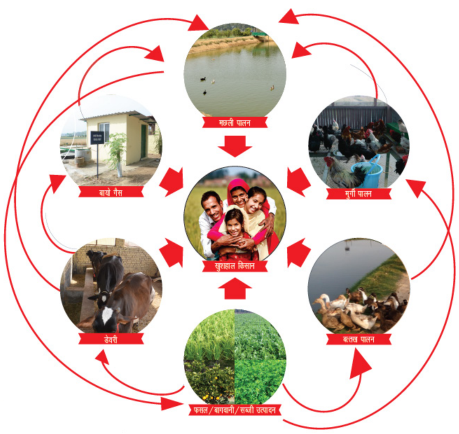

घटकों का समन्वय

2. **बागवानीः** बागवानी फसलें खाद्य एवं पौष्टिकता सुरक्षा, ग्रामीण रोजगार पारिस्थितिकीय संतुलन तथा विधायन उद्योग को कच्चा माल प्रदान करने में अहम भूमिका निभाती है। आर्थिक लाभ अर्जित करने व वैज्ञानिक ढंग से बागवानी करने हेतु उन्नत तकनीक अपनाना आवश्यक है। प्रचार माध्यम तथा संचार साधन अनुसंधान की उपलब्धियों को किसानों तक पहुँचाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हम आईसीएआर व कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा अनुमोदित बागवानी की नई तकनीकी एवं उन्नतशील प्रजातियाँ जैसे **आम** (पूसा श्रेष्ठ, पूसा प्रतिश, पूसा लालिमा, पूसा पीताम्बर, पूसा अरुणिमा, पूसा सूर्या, आम्रपाली, दशहरी, लंगड़ा, अरुणिका, अम्बिका, गौरव, राजीव, सौरव, रामकेला, तथा रत्ना), **अमरुद** (इलाहाबादी सफेदा, लखनऊ–49 (सरदार), ललित, श्वेता, अर्का मृदुला, अर्का अमूल्या, अर्का किरण, इलाहाबाद सुर्खा, हिसार सफेदा, हिसार सुर्खा, चित्तीदार, रेड फ्लेस्ड, नासिक धारदार), **किन्नु** (पीएयू किन्नू–1, डेजी) अनार (भगवा, कन्धारीलाल, गणेष, ज्योति, मृदुला, भगवा, अरक्ता, रूबी, जालौर सीडलैस, जोधपुर रेड), **फालसा** (शर्बती, लंबा फालसा और बौनी फालसा), **ऑवला** (बनारसी, फ्रान्सिस, चकईया, कृष्णा (एन ए– 5), नरेन्द्र– 6, नरेन्द्र– 7, नरेन्द्र– 9, नरेन्द्र– 10, कंचन), **केला** (पूवन, चम्पा, अमृत सागर, बसराई ड्वार्फ, सफेद बेलची, लाल बेलची, हरी छाल, मालभोग, मोहनभोग, रोबस्टा और शाकभाजी के लिए मंथन, हजारा, अमृतमान, चम्पा, काबुली, बम्बई, हरी छाल, मुठिया, कैम्पियरगंज तथा रामकेला), **कटहल** (एन जे–1, एन जे–2, एन जे–3, एन जे–15, स्वर्ण मनोहर, स्वर्ण पूर्ति, रसदार, खजवा, सिंगापुरी, गुलाबी, रुद्राक्षी), **नींबू** (पूसा उदित, पूसा अभिनव, कागजी प्रामलिनी, विक्रम, चक्रधर, पीकेएम 1, चयन 49, सीडलेस लाइम, ताहिती स्वीट लाइम : मिथाचिक्रा, मिथोत्र लिंबाः यूरेका, लिस्बन, विलाफ्रांका, लखनऊ बीडलेस), **करौंदा** (कैरिसा कैरान्डास, कैरिसा ग्रैन्डीफ्लोरा, कैरिसा बाइस्पिनोसा, कैरिसा इड्यूलिस, कैरिसा ओवेटा, कैरिसा स्पाईनेरम, कैरिसा पॉसिनेरिया, कैरिसा सुआविसिमा, पंत मनोहर, पंत सुदर्षन, पंत सुवर्णा, सीआईएसएच करौंदा 11) आदि को सरल और सहज भाषा के माध्यम से किसानों या फल उत्पादकों तक पहुँचा सकें।

बागवानी फसलें

3. दुग्ध उत्पादन (3 क्रॉस नस्ल गाय): इस प्रणाली के अन्तर्गत 1 हेक्टयेर भूमि के अनुसार किसान अपने फार्म पर कम से कम 3 गाय या भैंस पाल सकते हैं दुग्ध उत्पादन करने के लिए गाय एवं भैंस की अच्छी दुधारू वाली नस्ल ही पालें जैसे गाय की अधिक दूध देने वाली नस्ल साहिवाल, गिर, जर्सी तथा भैंस के अधिक दूध देने वाली नस्ल मुर्रा, भदावरी आदि। अच्छी नस्ल वाली गाय एवं भैंस काफी ज्यादा मात्रा में दूध देती है जिससे किसान ज्यादा मात्रा में दूध बेचकर अधिक मुनाफा कमा सकते है।

डेयरी पालन

4. मछली पालन: मत्स्य पालन का एक महत्वपूर्ण कारण यह भी है कि इससे ज्यादा आय में वृद्धि होती है एवं सरकार भी मछली पालन के लिए 70–80 प्रतिशत अनुदान भी प्रदान करती है मछली पालन हेतु तालाब का होना बहुत आवश्यक है क्योकि इसमें जल संचय होता है जिसका उपयोग मछली उत्पादन के अलावा पानी की कमी के दौरान फसल की सिंचाई में भी प्रयोग किया जा सकता है मछली की अच्छी पैदावार के लिए तालाब में कतला, मृगल एवं रोहू आदि को मछली पालन का एक मुख्य कारण यह भी है कि इसमें मछली के आहार की जरूरत बत्तख, मुर्गी एवं बकरियों के मलमूत्र द्वारा पूरी की जा सकती है जिससे उनको बाहरी आहार देने की जरूरत नहीं पड़ती व किसान की लागत को भी कम करती है। तालाब में मछली उत्पादन के अलावा भी जैसे सिंगाड़ा की खेती, कमल की खेती भी कर सकते है।

मधुर जल मछली पालन के लिए प्रजाति का चयन एवं संचयन अनुपात		
सिल्वर कार्प	सतह फीडर (Surface Feeder)	कातला
ग्रास कार्प	मध्य सतह फीडर (Column Feeder)	रोहू
कामन कार्प	तलीय फीडर (Bottom Feeder)	नैन

मत्स्य प्रजातियाँ	10000 अंगुलिकाओं की प्रति हेक्टेयर संचयन दर (%)		
कातला	40%	30%	10%
रोहू	30%	30%	30%
नैन	30%	20%	15%
सिल्वर कार्प	-	-	20%
ग्रास कार्प	-	-	10%
कामन कार्प	-	20%	15%

5. मुर्गी पालनः (कैरी देवेन्द्र, फ्रीजल, असील, कड़कनाथ, नेकनेड, ग्रामप्रिया, श्रीनिधि, वनराजा, धनराजा, कालाहांडी, कलिंग ब्राउन, पंजाब ब्राउन):– मुर्गी पालन एक उभरता हुआ व्यवसाय है जो किसानों को रोजगार पोषण और अच्छी

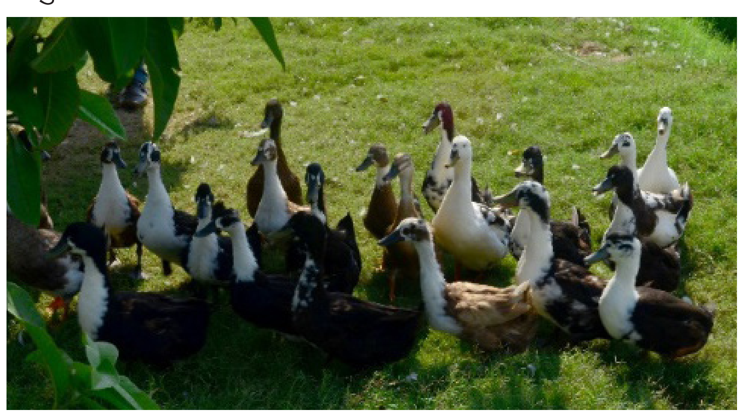

मुर्गी एवं बत्तख पालन

आमदनी प्रदान करता है जिससे गरीबी उन्मूलन और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित की जा सकती है एवं इसमें कम लागत लगाकर अच्छा मुनाफा भी कमाया जा सकता है इसके साथ ही इनके मलमूत्र को मछलियों के आहार के रूप में प्रयोग कर सकते हैं व अपनी लागत को कम कर सकते हैं मुर्गी पालन अधिकांश तालाब की सतह से ऊपर करना चाहिए जिससे उनका मलमूत्र सीधा तालाब में गिरे व मछली उसे खा सके। भारत का 80 से 85% मुर्गी पालन छोटे किसानों द्वारा किया जाता हैं।

6. बत्तख पालन (खाकी कैम्बेल, भारतीय धावक, सफेद पेकिन, मुस्कोवी): मत्सय पालन के साथ साथ बत्तख का भी पालन करें क्योंकि जब यह पानी में रहती है तब पानी में नत्रजन एवं ऑक्सीजन की आपूर्ति होती है एवं बत्तख के मलमूत्र से फाइटोप्लेन्टस एवं ज्यूप्लेन्टस का निर्माण होता है जो की मछलियों के भोजन के रूप में काम आता है एवं यह मछली पालन की लागत को भी कम करता है।

7. मशरूम उत्पादनः

1. मशरूम उत्पादन एक घर के भीतर करने योग्य कृषि कार्य प्रणाली है और इसे अन्य फसलों के समान उपजाऊ भूमि की आवश्यकता नहीं होती। अतः यह छोटे किसानों व भूमिहीनों के लिए उपयुक्त व्यवसाय है। इसकी जैव परिवर्तन क्षमता अधिक होती है और उगने के लिये प्रयोग किये जा रहे पदार्थ (कृषि अवशेष) के अनुपात में मशरूम उत्पादन अच्छा मिलता है। मशरूम उत्पादन के उपरान्त शेष बचे व्यर्थ जो स्पेंट कम्पोस्ट के नाम से जाना जाता है, को खाद में बदलने के बाद खेतों में प्रयोग किया जा सकता है। मशरूम उत्पादन बेराजगारों के लिए रोजगार का एक अच्छा साधन है।
2. मशरूम एक बहुत कम ऊर्जा का स्रोत (लो कैलोरी फूड) है क्योंकि इसमें पानी अधिक (90 प्रतिशत), शुष्क अवयव कम (10 प्रतिशत) और वसा कम (0.6 प्रतिशत) है। मशरूम की ऊर्जा में कमी अभिशाप नहीं अपितु मोटापा के शिकार लोगों के लिये वरदान है। स्टार्च तथा शर्करा जो मशरूम में न के बराबर है जिसके कारण यह मधुमेह के रोगियों के लिये उत्तम है। वैसे भी मधुमेह के रोगी को कम ऊर्जा–अधिक प्रोटीन (लो कैलारी–हाई प्रोटीन) खाने की सलाह दी जाती है जो मशरूम में पायी जाती है। वसा कम है, थोड़ी ही सही अच्छी गुणवत्ता की वसा है तथा कोलेस्ट्राल–विहीन है। इन तीनों गुणों के कारण हृदय रोग के प्रतिरक्षण तथा निवारण हेतु मशरूम एक उत्तम आहार है।
3. व्यवसायिक तौर पर हमारे यहाँ लगभग दस प्रकार की मशरूम का उत्पादन किया जाता है, इनमें बटन मशरूम (*अगेरिकस बाइस्पोरस*), शिटाके मशरूम (*लैन्टीनूला इडोड्स*), आयस्टर या ढिंगरी मशरूम (*प्लूरोटस* जातियां), पराल मशरूम/पैडीस्ट्रा (*वोल्वेरिएला* जातियां) तथा दूधिया मशरूम (*कैलोसाइवी इन्डिका*) हैं। प्रत्येक मशरूम की वृद्दि के लिएताममान की एक निश्चित सीमा होती है। इनमें से बटन मशरूम व सिटाके मशरूम ठंडी जलवायु में उगते हैं व इनको उगाने के लिए तापमान 20^{o} से॰ से कम होना चाहिए। पराल खुम्ब, दूधिया व आयस्टर मशरूम की विभिन्न प्रजातियों को उगाने के लिए तापमान 20–35^{o} से॰ होता है। बटन मशरूम की खेती केवल शीतकालीन (4–5 महीनों) में की जाती है। ऐसी जलवायु में पराल मशरूम (*वोल्वेरिएला* जातियां), दूधिया मशरूम (*कैलोसाइवी* इन्डिका) व प्लूरोटस (*आयस्टर* जातियां) मशरूम आसानी से उगाया जा सकता है।
4. राष्ट्रीय स्तर पर देश के समस्त राज्यों के किसानों, बेरोजगार युवाओं, विषय वस्तु विशेषज्ञों तथा अन्य अनुसंधान व विकास कार्य से जुड़े शोधकर्ताओं को प्रशिक्षण प्रदान करने की व्यवस्था राष्ट्रीय मशरूम अनुसंधान केन्द्र, सोलन, पर उपलब्ध है। यह प्रत्येक वर्ष निम्नलिखित प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करते है

   i) कृषक प्रशिक्षण कार्यक्रम

   ii) उद्यमी प्रशिक्षण कार्यक्रम

   iii) बाह्य परिसर प्रशिक्षण कार्यक्रम

   iv) प्रायोजित प्रशिक्षण कार्यक्रम

   v) अन्य प्रशिक्षण संस्थायें कार्यक्रम (खुम्ब परियोजना, उद्यान विभाग, चम्बाघाट, सोलन (हि.प्र.), इन्डो–डच मशरूम परियोजना, चौ. श्रवण कुमार कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर, हैक एग्रो मशरूम रिसर्च एवं डेवलपमेंट यूनिट, मुरथल, सोनीपत, अखिल भारतीय मशरूम उन्नयन परियोजना, पादप रोग विज्ञान विभाग, जी. बी. पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर, अखिल भारतीय मशरूम उन्नयन परियोजना, नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अखिल

बटन मशरूम

दूधिया मशरूम

ढिंगरी मशरूम

भारतीय मशरूम उन्नयन परियोजना, माइक्रोबायलोजी विभाग, पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना, अखिल भारतीय मशरूम उन्नयन परियोजना, पादप रोग विज्ञान विभाग, महाराणा प्रताप कृषि विश्वविद्यालय, उदयपुर, पादप रोग विज्ञान विभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली, पादप रोग विज्ञान विभाग, चंद्र शेखर आज़ाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर, पादप रोग विज्ञान विभाग, चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार)।

8. मधुमक्खी पालनः इन उधमों के साथ–साथ किसान मधुमक्खी पालन कर अपनी आय को बढ़ा सकता है। मधुमक्खी से शहद एवं मोम के अतिरिक्त अन्य पदार्थ, जैसे गोंद (प्रोपोलिस, रायल जेली, डंक–विष) भी प्राप्त होते है एवं इस प्रणाली के अन्तर्गत 1 हेक्टेयर भूमि में 4 बॉक्स रखें तथा मधुमक्खी पालन हेतु विदेशी मधुमक्खी जैसे– *ऐपिस मेलीफेरा, ऐपिस इंडिका, एपिस फ्लोरिया* और *ऐपिस डोरसाला, ऐपिस मेलीफेरा, ऐपिस डोरसाला, ऐपिस इंडिका*। *ऐपिस मेलीफेरा* सबसे ज्यादा शहद देने वाली एवं अण्डे देने वाली मधुमक्खी होती है किसान ध्यान दें बॉक्स को साफ़ सफाई वाली जगह रखें ताकि उनपर किसी बाह्य बीमारी का आक्रमण न हो। एक बॉक्स की कीमत लगभग 3500 होती है जिसमे 10 फ्रेम होती है एवं एक फ्रेम में 250 से 300 मधुमक्खियाँ होती है तथा एक फ्रेम से 200 ग्राम

शहद प्राप्त होता है इस तरह एक बार में एक बॉक्स से 2 किलो शहद प्राप्त होता है, लगभग 10–15 दिन में एक बार शहद निकलने लायक तैयार हो जाता है इस तरह एक महीने में 4 किलो शहद प्राप्त कर सकते है तथा बाजार में बेचकर अच्छा मुनाफा कमा सकते है।

9. कृषि–वानिकीः कृषि–वानिकी प्रणाली के अंतर्गत लगाये गए वृक्ष वायुमंडल को स्वच्छ बनाने में मदद करते हैं, ये वृक्ष वायुमंडल में फैली प्रदूषित एवं हानिकारक गैसों की मात्रा को कम करके पर्यावरण–संतुलन को बनाये रखते हैं। इसके साथ–साथ वृक्ष मृदा–अपरदन (मिट्टी का कटाव) को भी रोकते हैं। यह मिट्टी की उर्वरा–क्षमता को बढ़ाने एवं बनाए रखने में भी मददगार साबित हुए हैं। सहजन या ड्रमस्टिक प्लांट या हॉर्सरेडिश ट्री या बेन ऑयल ट्री (मोरिंगा ओलिफेरा) भारतीय मूल का मोरिन्गासाए परिवार का सदस्य है। सामान्यतया यह एक बहुवर्षिक, कमजोर तना और छोटी–छोटी पत्तियों वाला लगभग दस मीटर से भी उंचा पौधा है। यह कमजोर जमीन पर भी बिना सिंचाई के सालों भर हरा–भरा और तेजी से बढने वाला पौधा है। हाल के दिनों में सहजन का साल में दो बार फलने वाला वार्षिक प्रभेद तैयार किया गया है, जो न सिर्फ उत्पादन ज्यादा देता है बल्कि यह प्रोटीन, लवण, लोहा, विटामिन–बी, और विटामिन–सी. से भरपूर है। सहजन की साल में दो बार फलने वाले उन्नतशील प्रजातियों में पी.के.एम.1, पी.के.एम. 2, कोयेंबटूर 1 तथा कोयेंबटूर 2 प्रमुख हैं। साल में एक पौधा से लगभग 40–50 किग्रा फल प्राप्त हो जाता है। एक महीने के तैयार पौध को जुलाई–सितम्बर तक रोपनी कर दें। लगाने के तीन महीने के बाद 100 ग्राम यूरिया .100 ग्राम सुपर फास्फेट. 50 ग्राम पोटाश प्रति गढ्ढे की दर से डालें तथा इसके तीन महीने बाद 100 ग्राम यूरिया प्रति गढ्ढे का पुनः प्रयोग करें। सहजन पर किए गए शोध से यह पाया गया कि मात्र 15 किग्रा गोबर की

खाद प्रति गढ्ढे तथा एजोसपिरिलम और पी.एस.बी. (5 किग्रा/हेक्टेयर) के प्रयोग से जैविक सहजन की खेती, उपज में बिना किसी ह्रास के किया जा सकता है।

सहजन

10. वर्मी कम्पोस्टः वर्मी कम्पोस्ट व जीवांश खादों को रासायनिक उर्वरकों के विकल्प के रूप में सस्ते और पर्यावरण की दृष्टि से उपयुक्त पाए गए हैं। जीवांश खादों को पशुओं के मूत्र व गोबर, कूड़ा–कचरा, अनाज की भूसी, राख, फसलों एवं फलों के अवशेष इत्यादि को सड़ाने गलाने में प्राथमिक योगदान केंचुओं को होने के कारण इन्हें किसान का मित्र भी कहा जाता है। केंचुए जैविक पदार्थों का भोजन करते हैं और मल के रूप में केंचुआ खाद (वर्मीकम्पोस्ट) प्रदान करते हैं जो जैविक एंव जीवांश खादों की सूची में महत्वपूर्ण खाद है। केंचुऐं की प्रजातियॉ जैसे– *आइसीनियाँ फीटिडा, यूडिलस, यूजेनी* तथा *पेरियोनिक्स एकस्केवेटस* प्रमुख है।

11. चारदीवारी पर बहुउदेशीय बेलदार एवं झाड़ीदार सेम (डॉलीकस लबलब): सेम भी एक उपयोगी दलहनी फसल है, जिसकी फली, बीज, जड़ें, फूल और पत्तियां खाने के काम में आती हैं। इसकी फलियों में प्रोटीन की मात्रा लगभग 2.4 ग्राम प्रति 100 ग्राम पाई जाती हैं। खनिज और विटामिन भी इसमें प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। सेम में एंटीआक्सीडेंट का गुण पाया जाता है। भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान की तरफ से इसकी खेती के लिए उन्नत प्रजातियों को विकसित किया गया है। सेम की उन्नतशील प्रजातियॉ जैसे पूसा अर्ली प्रौलिफिक, पूसा सेम–3, पूसा सेम–2 ,कल्याणपुर टाइप 1, कल्याणपुर टाइप 2, सेलेक्शन–21, डब्ल्यूबीसी–2, रजनी, एचडी–1, एचडी–26, एचए–3, डीबी–1, डीबी–18, जेडीएल–53,

जेडीएल–85 और सेलेक्शन 71 की खेती करके अच्छी उपज ली जा सकती है।

4. समन्वित कृषि प्रणालीः एक उदाहरण

देश के 86% किसान जिनकी जोत 2 हेक्टेयर से कम है उनकी घरेलु आवश्यकताओं तथा आय मे निरंतर वृद्धि को ध्यान में रखते हुए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने समन्वित कृषि प्रणाली को एक मॉडल के रुप में विकसित किया है जिसमें फसल उत्पादन, बागवानी, कृषि–वानिकी के साथ–साथ, दुग्ध उत्पादन, मुर्गी पालन, बत्तख पालन, मछली पालन, मधुमक्खी पालन और मशरूम उत्पादन आदि है जो कि एक दूसरे पर आधारित उद्यम है। शोध परिणाम यह दर्शाते है कि केवल धान–गेहूं फसल प्रणाली कि अपेक्षा किसान यदि समन्वित कृषि प्रणाली मॉडल अपनायें तो अधिक आय अर्जित कर सकते है। धान–गेहूं फसल प्रणाली की अपेक्षा सीमान्त किसान (<1 हेक्टेयर) अन्य कृषि उद्यमों का सामंजस्य करके जैसे दुग्ध उत्पादन, मछली पालन तथा मुर्गी पालन के द्वारा अधिक लाभ प्राप्त कर सकता है जबकि लघु कृषक (2 हेक्टेयर) फसल उत्पादन, बागवानी, के साथ–साथ दुग्ध उत्पादन, मछली पालन एवं कृषि–वानिकी द्वारा 86% अधिक लाभ कमा सकता है। तालिका 1 में समन्वित कृषि प्रणाली मॉडल में विभिन्न कृषि उद्यमों में सकल आय तथा उत्पादन लागत व शुद्ध आय का विवरण दिया गया है जोकि यह दर्शाता है कि इस प्रकार से खेती में समन्वय से न केवल आय में वृद्धि होती है बल्कि वर्ष भर किसान के परिवार को रोजगार प्राप्त होता है।

तालिका 1: उत्तर भारतीय परिस्थितियों में लघु एवं सीमान्त कृषकों की सतत आजीविका हेतु समन्वित कृषि प्रणाली मॉडल का आर्थिक विश्लेषण (प्रति हे0)

उद्यम घटक	क्षेत्र प्रति इकाई	सकल आय (रु)					उत्पादन लागत (रु)					शुद्ध आय (रु)					रोजगार दिवस
		2017–18	2018–19	2019–20	2020–21	2021–22	2017–18	2018–19	2019–20	2020–21	2021–22	2017–18	2018–19	2019–20	2020–21	2021–22	
फसल उत्पादन	0.7 हेक्टेयर	165354	195457	195466	200989	244337	72156	91236	88953	92115	110281	93198	104221	106512	108874	134056	150
दुग्ध–उत्पादन	3 गाय (70 मी²)	492120	511235	511258	525704	539910	330482	343565	343438	355646	359025	161638	167670	167820	170058	180885	365
बत्तख पालन	35 पक्षी	61090	62006	62009	63761	53000	30679	31245	31220	32330	33432	30411	30761	30789	31431	19568	26
मत्स्य पालन	0.1 हेक्टेयर	91080	90426	90430	92985	89261	53792	58632	58608	60691	51708	37288	31794	31823	32294	37553	26
मुर्गी पालन	50 पक्षी	53050	51200	51202	52649	55380	24272	26354	26334	27270	28199	28778	24846	24868	25379	27181	26
फल उत्पादन	0.05 हेक्टेयर	19900	17756	17757	18259	15623	8658	9102	9095	9418	9418	11242	8654	8662	8840	6205	15
कृषि–वानिकी	120 मी²	4560	4662	4662	4794	3794	1331	1422	1452	1504	1504	3229	3240	3210	3290	2290	3
गोबर संचालित बायो गैस	50 मी² (के.वी. आई.सी. मॉडल)	9000	8563	8563	8805	7784	5000	3954	3950	4090	4231	4000	4609	4613	4715	3553	12
चारदीवारी सेम फसल	0.03 हेक्टेयर	10000	11213	11214	11531	7421	2000	2155	2147	2223	2223	8000	9058	9066	9307	5198	5
कुल आय	1.0 हेक्टेयर	9,06,154	9,52,518	9,52,561	9,79,476	1016510	5,27,370	5,67,665	5,65,198	585288	600021	3,78,784	3,84,853	3,87,363	394188	416489	628

संक्षेप में कहा जा सकता है कि समन्वित कृषि प्रणाली एक ऐसा मॉडल है जिसके द्वारा संसाधनों का समुचित उपयोग, समय का सदूपयोग तथा लागत में कमी के साथ अधिक लाभ व सालभर रोजगार प्राप्त किया जा सकता है। यह मॉडल टिकाऊ उत्पादन व पर्यावरण को प्रदूषित होने से बचाने के लिये भी उत्तम विकल्प है। इस लिये ऐसी प्रणाली को देश के सभी सीमान्त एवं लघु किसानों के बीच प्रसारित करना अनिवार्य है तथा विभिन्न माध्यमों से उनको लाभान्वित करना भी जरुरी है। इससे न केवल किसान कि अधिक आमदनी एवं टिकाऊ उत्पादन उपलब्ध होगा बल्कि इससे सामाजिक व आर्थिक स्तर में सुधार व सतत आजीविका उपलब्ध हो सकेगी।

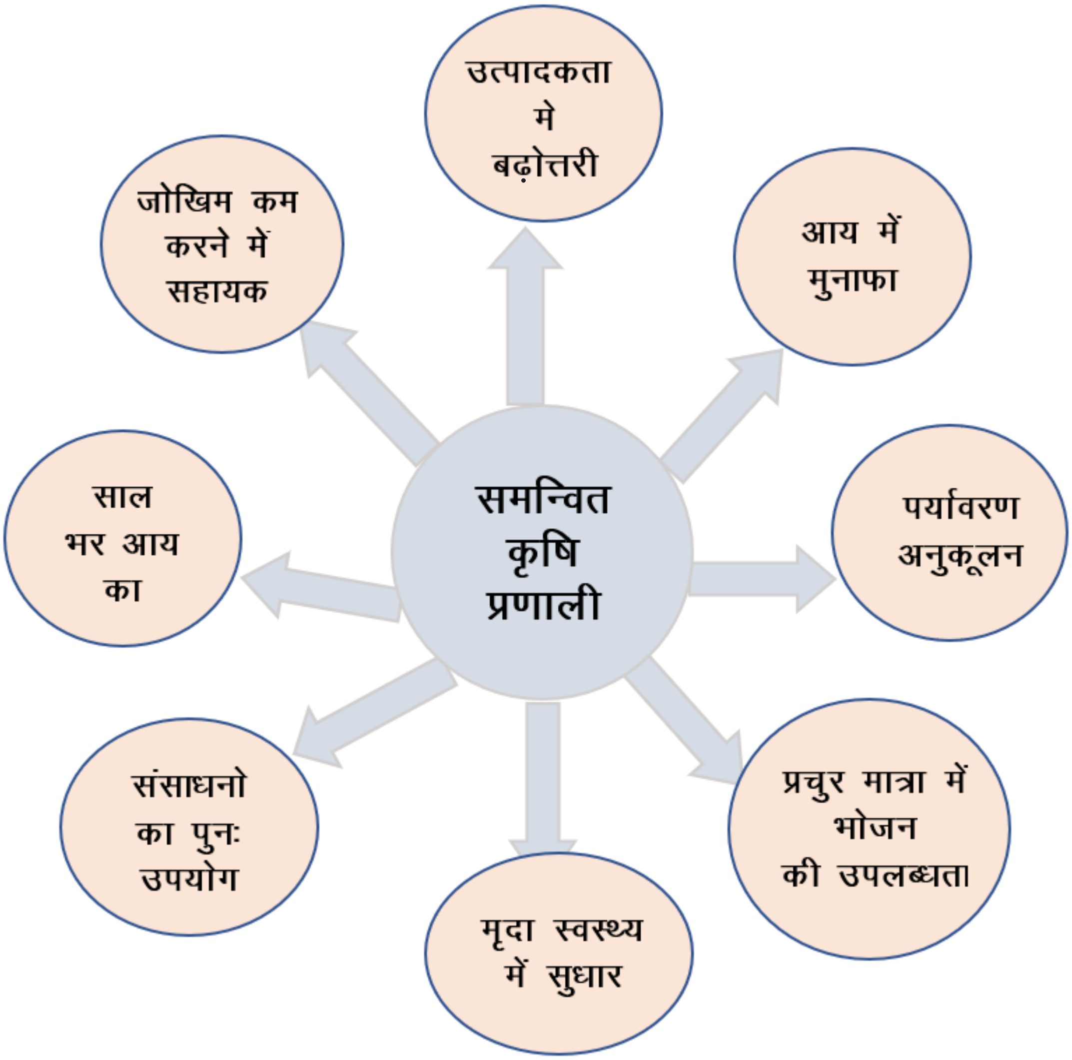

10. माडल का प्रभावः

- मिट्टी के बेहतर स्वास्थ्य के साथ–साथ संसाधनों का कुशल उपयोग।
- वर्ष भर संतुलित आहार के साथ नियमित रोजगार दिवस (628 श्रम दिवस) व आय (रू 416489 लाख)।
- ग्रामीण युवाओं के लाभप्रद रोजगार के लिए एक आकर्षक विकल्प।

किसानों की आय हेतु उपयोगी वृक्ष लसोड़ा का संग्रह, संरक्षण एवं उपयोग

ओमप्रकाश धारीवाल, प्रवीण कुमार सिंह, सुरेंदर कुमार मलिक, रिंकू कुमारी एवं दिनेश प्रसाद सेमवाल
भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, नई दिल्ली

आपने अपने घर के आस पास खेतों में या किसी बगीचे में लसोड़े के पेड़ देखे होंगे लेकिन शायद आप इसकी खूबियों के बारे में नहीं जानते होंगे। यह एक सामान्य सा दिखने वाला पौधा किसानों की आय बढ़ाने में काफी उपयोगी है, लसोड़ा अनेकों बीमारियों को ठीक करने वाली जड़ी बूटी है। इसके फल, पत्ते, बीज और छाल सेहत के लिए बहुत फायदेमंद है, इसको स्थानीय एवम् अंग्रेजी भाषाओं में अनेकों रूपों में जाना जाता है। इसका वानस्पतिक नाम *कॉर्डिया मिक्सा,* अंग्रेजी नाम भारतीय चेरी एवं स्थानीय भाषा में इसे लसोड़ा, लमेडा, लसेडा, लहेसुआ, गोंदा और गोंदी आदि नामो से जाना जाता है, यह *बोरागिनेसी* फेमिली/परिवार का सदस्य है।

उत्पत्ति और वितरणः उत्तर–पश्चिमी भारत का मूल निवासी लसोड़ा पूरे देश में मुख्य रूप से 5,000 फीट की ऊँचाई तक गर्म क्षेत्रों में पाया जाता है, यह प्राकृतिक जंगली रूप में पाया जाता है और कहीं कहीं इसकी खेती भी की जाती है। लसोड़ा घर के बगीचों और किसानों के खेतों में कम और अधिक संख्या में उगाया जाता है। बाजारों में लसोड़ा का फल 50–80 रुपये प्रति किलोग्राम मिलता है और हमेशा इसकी बहुत मांग रहती है। बहरहाल, हम इस फल के फायदे बताएंगे और साथ ही इस बारे में भी जानकारी देंगे कि इसका इस्तेमाल कहां–कहां होता है। इस पेड़ के फल, पत्ते, छाल और बीज हमारी सेहत के लिए बहुत फायदेमंद है। फल हमारी समग्र सेहत के लिए लाभकारी होते हैं पेड़ों के फलों के बारे में हम और आप पूरी तरह से अंजान रहते हैं। लसोड़ा का पेड़ भी आम के पेड़ की तरह आकर मे बड़ा होता है और इसके फल बहुत चिकने होते हैं।

इसका पौधा मध्यम आकार का पेड़, पर्णपाती, सरल पत्तियां, वैकल्पिक, आकार और माप में परिवर्तनशील, मोटे तौर पर अंडाकार और फटे होठों की तरह कटी हुई टहनियां व तना, आधार गोल या हृदयाकार। फल गोल नाशपाती के आकार का, चिपचिपा युक्त गूदा जिसमें बीज लगा होता है। कच्चे फल हरे होते हैं जो पकने पर पीले से गुलाबी हो जाते हैं (चित्र 1ए)। फरवरी–मार्च के दौरान फूल आते हैं और मई–जून के दौरान फलों को उपयोग हेतु तोडा जाता है। *कॉर्डिया क्रेनाटा* का पेड़ *कॉर्डिया मिक्सा* से छोटा होता है और फल तीखे और आकार में छोटे होते हैं। *कॉर्डिया रोथाई* एक छोटा फैलने वाला पेड़ है (चित्र 1एफ) जिसमें लंबी, आयताकार पत्तियां होती हैं, फल बहुत छोटे होते हैं जो पकने पर चमकदार लाल हो जाते हैं और अत्यधिक लसदार और मीठे होते हैं।

प्रबर्धनः लसोड़ा का पर्वर्धन बीजों के माध्यम से होता है, ताजे कटे बीजों का उपयोग पौधे बनाने के लिए किया जाता है। कलियों के माध्यम से भी वानस्पतिक प्रसार सफल होता है और इसे पैच बडिंग के माध्यम से भी पर्वर्धित किया जाता है जिसमें 70–80% सफलता मिली है।

किस्मेंः लसोड़ा में कोई पहचानी गई किस्में उपलब्ध नहीं हैं। कुछ किसानों द्वारा चुने गए पौधों का उपयोग नए पौधे उगाने के लिए किया जाता है। इस फल की कोई संगठित खेती नहीं है, हालाँकि, हाल ही में कुछ प्रगतिशील किसानों ने स्थानीय चयनों (प्रजाति) का उपयोग करके राजस्थान और हरियाणा में छोटे व्यावसायिक बाग़ शुरू किए हैं (चित्र 1सी)। अचार के रूप में प्रसंस्करण और अन्य औषधीय उपयोगों के लिए इसके फलों की बहुत माँग है।

इसलिए इस प्रजाति के फल का भविष्य बहुत अच्छा है और व्यावसायिक खेती विशेष रूप से उत्तर, पश्चिम और मध्य भारत में बढ़ रही है।

महत्वपूर्ण उपयोगः

लसोड़ा का पौधा देश के विभिन्न भागों में विविध उपयोगो में लाया जाता है। दक्षिण गुजरात और राजस्थान के लोग इसे अपने खान–पान में इस्तेमाल करते हैं। लसोड़े के पत्तों का स्वाद पान की तरह होता है और इस पेड़ की तीन से ज्यादा प्रकार की जातियाँ होती हैं लेकिन लमेड़ा और लसोड़ा फेमस हैं। कच्चे ताजे फल तीखे होते हैं जो सब्जी और अचार के रूप में उपयोग किए जाते हैं और पके हुए फल खाए जाते हैं।

पोषक तत्वों से भरपूर है लसोड़ा

लसोड़ा पोषक तत्वों से समृद्ध होता है और कुछ लोग इसे गोंदा और लहेसुआ के नाम से भी जानते हैं। लसोड़ा में प्रोटीन, क्रूड फाइबर, कार्बोहाइड्रेट, वसा, आयरन, फॉस्फोरस व कैल्शियम जैसे पोषक तत्व पाए जाते हैं। इसके साथ ही लसोड़ा एंटी इंफ्लेमेटरी गुणों से भी भरपूर है।

लिवर को ठीक कर सकता है लसोड़ा

लसोड़े के फल में लिवर को ठीक करने वाले कई पोषक तत्व होते हैं। जनवरी 2007 में नाइजीरियन जर्नल ऑफ नेचुरल प्रोडक्ट्स एंड मेडिसिन में चूहों पर प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार, तेल, ग्लाइकोसाइड्स, फ्लेवोनोइड्स, स्टेरोल्स, सैपोनिन्स, टेरपीनोइड्स, एल्कलॉइड्स, फेनोलिक एसिड्स, कौमारिन्स, टैनिन्स, रेजिन और गम्स की उपस्थिति का पता चला है। म्यूसिलेज में लिवर हीलिंग गुण पाए जाते हैं।

उच्च रक्तचाप के लिए फायदेमंद है लसोड़ा

उच्च रक्तचाप दुनिया भर में सबसे आम बीमारी है लेकिन आप इसे घरेलू नुस्खों के जरिए भी ठीक कर सकते हैं। साल 2016 में प्रकाशित एक अध्ययन से पता चला है कि लसोड़े के फल में उच्च–रक्तचापरोधी गुण होते हैं। अध्ययन 5 सप्ताह के लिए किया गया था और यह पाया गया कि यह फल उच्च रक्तचाप के स्तर को प्रबंधित कर सकता है और ऑक्सीडेटिव तनाव को कम कर सकता है।

त्वचा विकार को दूर करता है लसोड़ा

बरसात के मौसम में त्वचा पर फोड़े–फुंसी होना आम बात है। ये समस्या बच्चों में खासकर देखने को मिलती है जो खेलकूंद में किसी कीड़े के संपर्क में आ जाते हैं। ऐसे में अगर आपके पास लसोड़े का पेड़ है तो उसके पत्ते को पीसकर प्रभावित त्वचा पर लगाएंगे तो आराम मिलेगा। जो लोग खुजली और एलर्जी की समस्या से परेशान हैं उनके लिए भी लसोड़ा सहायक है। इसके लिए आप लसोड़े के बीजों को पीसकर खुजली वाली जगह पर लगाएं जिससे आराम मिलेगा।

मुहं के छाले व गले की खराश मिटा देता है लसोड़ा

अगर मुहं में छाले हो जाते है तो लसोड़े के फलों को अपने दांतों से अच्छी तरह चबाएं और कुछ देर तक मुहं में ही घुमाएँ इससे आपके मुहं के छाले ठीक हो जायेंगें और अगर आपका गला खराब है तो ठीक करने के लिए लसोड़े की छाल को पानी में उबालें और फिर छानकर पिएं। स्वाद के लिए आप इसमें काली मिर्च और शहद भी मिला सकते हैं। इससे आपके गले की खराश दूर हो जाएगी। इसके अलावा इसके पेड़ की छाल का काढ़ा महिलाओं को माहवारी में होने वाले दर्द से भी राहत दिलाता है।

जोड़ों का दर्द और गठिया में राहत दिलाता है लसोड़ा

लसोड़ा का नियमित सेवन गठिया एवं जोड़ों के दर्द से राहत दिलाने के लिए भी काम आता है। पाकिस्तान जर्नल ऑफ बायोलॉजिकल साइंसेज में प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार, लसोड़ा के फलों और पत्तियों में एनाल्जेसिक गुण होते हैं जो जोड़ों के दर्द से राहत दिला सकते हैं।

आनुवंशिक संसाधन प्रबंधनः

संग्रहः कॉर्डिया प्रजाति विशेष रूप से *कॉर्डिया मिक्सा* की आनुवंशिक विविधता को भा.कृ.अनु.प.– राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो (एनबीपीजीआर) द्वारा राजस्थान, हरियाणा, गुजरात, मध्य प्रदेश, हिमाचल प्रदेश और उत्तर

प्रदेश से एकत्र किया गया है। विभिन्न कॉर्डिया प्रजातियों के 153 परिग्रहण एकत्र किए गए हैं। एनबीपीजीआर द्वारा चौधरी चरण सिंह हरियाणा एग्रीकल्चर यूनिवर्सिटी (सीसीएसएचएयू), क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र, बावल के सहयोग से हरियाणा के रेवाड़ी, महेंद्रगढ़ और भिवानी जिलों से कुल 45 जननद्रव्य एकत्र किए गए हैं और सीसीएसएचएयू, क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र, बावल और एनबीपीजीआर, क्षेत्रीय केन्द्र, जोधपुर के फील्ड जीन बैंक में जननद्रव्य की स्थापना की गई है। एनबीपीजीआर में भारत के छह राज्यों से *कॉर्डिया मिक्सा, कॉर्डिया क्रेनाटा* और *कॉर्डिया रोथाई* सहित 57 परिग्रहण एकत्र किए गए हैं। एकत्रित जननद्रव्य में फलों के वजन, आकार, सतह की विशेषता, गूदा सामग्री, बीज के आकार, वजन और आकार में काफी विविधता पाई गई। एक आशाजनक परिग्रहण जिसमें मोटे फल, चमकदार सतह और प्रचुर फलन है, राजस्थान के कोटपुतली के पास स्थानीय किसानों द्वारा स्थानीय जननद्रव्य की पहचान की गई है जिसकी स्थानीय बाजार में बहुत मांग है।

लक्षण वर्णनः विभिन्न स्रोतों से एकत्रित *कॉर्डिया मिक्सा* के जननद्रव्य को फल और बीज के रूपात्मक लक्षणों के आधार पर चरित्रीकरण किया गया है। फल परिपक्वता के आधार पर दो प्रकार के लसोड़ा फलों की पहचान की, एक प्रारंभिक प्रकार जिसमें छोटे, शलजम के आकार के फल होते हैं और दूसरा बड़े और गोलाकार आकार के फलों के साथ देर से पकने वाले। लसोड़ा की कोई मानक किस्में नहीं हैं, हालांकि, उन्हें उनके फल के आकार के आधार पर दो समूहों में बांटा जा सकता है, अर्थात् मोटे और छोटे फल एनबीपीजीआर में भौतिक–रासायनिक लक्षण वर्णन के लिए कुल 24 जननद्रव्य का उपयोग किया गया। फल अंडाकार आकार के थे। फलों की लंबाई 1.41 से.मी. से 2.72 से.मी. और चौड़ाई 1.29 से 2.92 से.मी. तक भिन्न–भिन्न थी। फलों के वजन में 1.12 ग्राम से 9.82 ग्राम तक का बड़ा अंतर देखा गया, जिसमें मीठास 0.680 ब्रिक्स से 1.140 ब्रिक्स तक था। गूदे की मोटाई 0.23 से.मी. से 0.56 से.मी. तक दर्ज की गई। बीज के गुणों और लंबाई में भिन्नता के संबंध में 1.01 से.मी. से 1.17 से.मी. और चौड़ाई 1.07 से.मी. से 1.91 से.मी. तक थी। बीजों के वजन में भी 0.21 ग्राम से 1.26 ग्राम तक का बड़ा अंतर देखा गया। सभी परिग्रहणों में से सात बड़े फलों, उच्च टीएसएस, गूदे की मोटाई और छोटे हल्के बीजों के लिए आर्थिक मूल्य के मामले में बेहतर पाए गए। ये परिग्रहण उच्च फल लंबाई और चौड़ाई के लिए आई.सी–546090 हैं, इसके बाद आई.सी–564563 हैं। उच्चतम टीएसएस परिग्रहण आई.सी–564553, 564548 और 564553 में पाए गए। सबसे गूदेदार फल आई.सी–564547, 564559 और 564556 में पाए गए। सबसे हल्के बीज आई.सी–564550, 564555 और 564563 में पाए गए।

संरक्षणः लसोरा के जर्मप्लाज्म को फील्ड जीन बैंक में संरक्षित किया जा रहा है, जिसमें सीसीएसएचएयू, क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र, बावल (30), भा.कृ.अनु.प.–सीआईएएच, बीकानेर (65), एनबीपीजीआर क्षेत्रीय केंद्र, जोधपुर (73) और एएनडीयूएटी, फैजाबाद शामिल हैं। लसोरा को आमतौर पर बीजों द्वारा प्रबर्धित किया जाता है। इसके अलावा जुलाई–सितंबर के दौरान अंकुर रूटस्टॉक्स पर कलिकायन सफलतापूर्वक किया जा सकता है। एनबीपीजीआर में किए गए विस्तृत अध्ययनों से पता चला है कि बीज लगभग 25% नमी पर गिर जाते हैं और उच्च अंकुरण क्षमता (94%) प्रदर्शित करते हैं। बीज सूखने के प्रति सहनशील होते हैं। *कॉर्डिया मिक्सा* (24 अभिगम), *कॉर्डिया क्रेनाटा* (3 अभिगम) और *कॉर्डिया रोथाई* (9 अभिगम) के बीजों को सफलतापूर्वक निम्न ताप क्रम पर द्रव्य नाइट्रोजन में क्रायोस्टोर भी किया गया है।

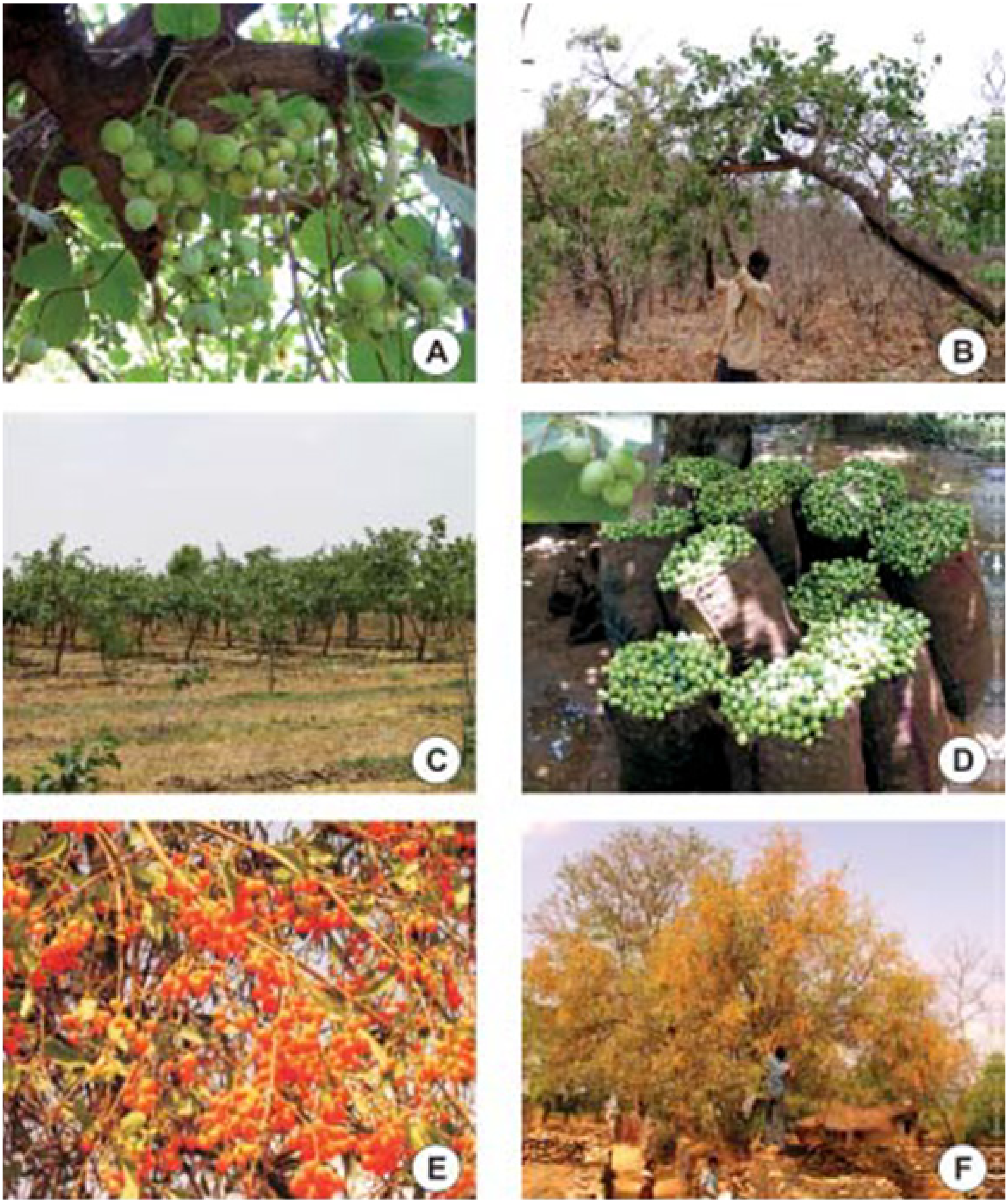

कॉर्डिया प्रजातियों में सर्वेक्षण, संग्रह और परिवर्तनशीलताः

A) लसोड़ा में बड़े फलों के साथ प्रचुर मात्रा में फल देने वाली फसल

B) राजस्थान के सीतामाता रिजर्व फॉरेस्ट में लसोड़ा का प्राकृतिक जंगली पेड़

C) राजस्थान के पाली जिले में लसोड़े का नव स्थापित बाग

D) बाज़ार ले जाने के लिए पैक किए गए ताज़ा फल

E) अर्धपालतू स्थिति में *कॉर्डिया रोथाई* में प्रचुर फलन

F) राजस्थान में स्थानीय लोगों द्वारा एकत्रित किए जा रहे कॉर्डिया रोथाई के फल

मौखिक संचार हेतु प्रसार वार्ता का महत्व और सुचारु उपयोग

मनजीत सिंह नैन एवं ज्योति रंजन मिश्रा
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110 012

केवल मनुष्य को ही वाणी रूपी उपहार मिला हुआ है जो की अपनी आवश्यकताओं और हितों को पूरा करने के लिए विभिन्न स्थितियों में एक–दूसरे के साथ संवाद करता रहता है। लेकिन सभी प्रकार के संचार जैसे गपशप, बक–बक और कोलाहलपूर्ण बातचीत योजनाबद्ध नहीं होते अतः इस तरह के संचार को प्रसार वार्ता की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता है। प्रसार वार्ता मूल रूप से अन्य वार्ता और चर्चा से अलग है। प्रसार वार्ता को निम्नानुसार परिभाषित किया जा सकता हैः–

"श्रोताओं को सक्रिय करके ज्ञान प्रदान करने के लिए लोगों के समूह के लिए यह मौखिक स्पष्टीकरण (या प्रस्तुति या संचार) है"।

प्रसार वार्ता (एक्सटेंशन टॉक) भाषण या व्याख्यान विधियों से अलग है। भाषण में सूचना का प्रवाह हमेशा एक दिशा में होता है और संचारक (सी) और रिसीवर (आर) के बीच दो तरफा बातचीत की संभावना नहीं होती है। व्याख्यान पद्धति में भी जानकारी का प्रवाह, ज्यादातर समय सी से आर तक होता है (सिवाय प्रश्न पूछना जो की कम्युनिकेटर द्वारा किए जाते हैं)। अतः दोनों के बीच थोड़ा ही पारस्परिक विचार–विमर्श होता है।

प्रसार वार्ता में जानकारी का प्रवाह, दोनों और से होता है और सी और आर के बीच की पारस्परिक बातचीत अन्य दो तरीकों की तुलना में अधिक होती है।

भाषण	व्याख्यान	प्रसार वार्ता
100% सी(C) –– आर(R)	80% सी(C) –– आर(R) 20% आर(R) –– सी(C)	50% सी(C) –– आर(R) 50% आर(R) –– सी(C)

जानकारी के प्रवाह को दर्शाने वाला चित्र

वयस्कों (किसानों) के लिए प्रसार वार्ता पसंदीदा तरीका है। क्योंकि उनके पास कुछ ज्ञान और अनुभव होता है, इसलिए, उन्हें निष्क्रिय श्रोताओं के रूप में नहीं माना जाना चाहिए। उन्हें प्रश्न–उत्तर तकनीक के माध्यम से भाग लेने के लिए पर्याप्त अवसर मिलना चाहिए ताकि उनके मूल्यवान अनुभवों और ज्ञान का भी संचारक द्वारा उपयोग और समावेश किया जा सके। इस प्रकार, प्रसारवार्ता किसानों के लिए मौखिक संचार का सबसे प्रभावी और उपयुक्त तरीका है।

प्रसार वार्ता (एक्सटेंशन टॉक) के फायदे

1. इस पद्धति के माध्यम से हम कम समय में ज्यादा सामग्री (ज्ञान) प्रदान कर सकते हैं,
2. यह विधि सभी प्रकार के समूहों के लिए उपयुक्त है।
3. यह विषय को पेश करने के लिए एक प्रभावी उपकरण है।

प्रसार वार्ता (एक्सटेंशन टॉक) के नुकसान

1. शिक्षार्थियों के निष्क्रिय होने पर यह विधि उपयुक्त नहीं है।
2. इस पद्धति से कौशल का शिक्षण संभव नहीं है।
3. अच्छा निष्पादन (इस पद्धति के माध्यम से प्राप्त ज्ञान का) मुश्किल है।

प्रसार वार्ता के मूल तत्व

1. **संचारक (कम्युनिकेटर)**: कैसा होना चाहिए?
   - ठीक से बोल सके।
   - विषय वस्तु को जानें।
   - स्पष्ट उद्देश्य रखें।
   - जिसका शिक्षण विधियों/तकनीकों के चयन और उपयोग में कौशल हो।

• जिसके पास एक शिक्षण योजना हो।

• आत्मविश्वासी और चतुर हो।

2. **विषय वस्तु:** विषय वस्तु चयन करते हुए निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान दिया जाना चाहिए:

- जरूरत और रुचि आधारित हो।
- मान्य, प्रामाणिक, तथ्यात्मक और अनुकूल या उपयुक्त हो।
- ठीक से व्यवस्थित हो।
- उद्देश्यों से संबंधित हो।
- समझ में आने योग्य हो।

3. **श्रोता:** प्रसार वार्ता की उपयोगिता को बढ़ाने हेतु श्रोता में निम्न गुण होने चाहिए:

- विषय को जानने की आवश्यकता होनी चाहिए।
- विषयवस्तु का अपनी व्यक्तिगत स्थिति में प्रयोग/प्रयुक्त कर सकते हैं।

4. **संचार तकनीक:** अच्छी तकनीक के गुणों में शामिल हैं:

- दर्शकों को उत्तेजित करें।
- संदेश को स्पष्ट और व्यवस्थित रूप से व्यक्त करें।
- सोच और भागीदारी को बढ़ावा देना।
- विषय वस्तु के अनुकूल हो।
- सही समय पर और उचित क्रम में उपयोग किया जा सके।

5. **भौतिक सुविधाएं**

- बाहर की उद्विग्नताया विकर्षण से मुक्त हो।
- अच्छा प्रकाश होना चाहिए।
- बैठने की उचित व्यवस्था।

प्रसार वार्ता की आयोजन योजना

किसी भी प्रसार वार्ता की आयोजन की योजना हमेशा अग्रिम रूप से बनाई जानी चाहिए और निम्नलिखित तत्वों पर उचित ध्यान दिया जाना चाहिए:

1. **उद्देश्य:** उद्देश्यों में निम्न गुण होने चाहिए:

i) विशिष्ट

ii) अच्छी तरह से परिभाषित

iii) व्यवहार में परिवर्तन के संदर्भ में मापने योग्य

iv) प्राप्त करने योग्य।

2. **श्रोता:** इस संदर्भ में यह सुनिश्चित करना चाहिय:

i) आकार या संख्या

ii) शिक्षा का स्तर

iii) ज्ञान

iv) अनुभव

v) आवश्यकता / ब्याज

vi) सामाजिक वातावरण

vii) उम्मीदें।

3. **विषय वस्तु:** विषय वस्तु के बारे में निम्न बिन्दुओं को ध्यान में रखने की आवश्यकता होती है:

- मान्य, प्रामाणिक, तथ्यपूर्ण और उपयुक्त हो।
- उद्देश्यों से सम्बंधित हो।
- समझ में आने लायक हो।

विषय वस्तु को एकत्र करके निम्नलिखित बिन्दुओं की मदद से निस्पंदन (फ़िल्टर) किया जाना चाहिए

i) विषय के बारे में जानकारी को अच्छी प्रकार पढ़ना,

ii) सूचनात्मक पढ़ने से चयनात्मक पढ़ना।

iii) चयनात्मक पढ़ने से अंतिम रीडिंग।

सामग्री के इस फ़िल्टरिंग का निर्धारण करने वाले कारक विषय की विशिष्टता, उपलब्ध समय और दर्शकों की आवश्यकता/रुचि पर भी निर्भर होते हैं।

4. **इकाई कर्ण:** अंतिम विषय वस्तु को चरणों (इकाइयों) में तोड़ दिया जाना चाहिए ताकि दर्शक आसानी से समझ सकें और इसे प्रतिधारित कर सकें।

5. क्रम व्यवस्थाः दर्शकों की बेहतर स्मरण के लिए विषय वस्तु को उचित क्रम (अनुक्रम) में प्रस्तुत किया जाना चाहिए। ऐसा करते समय, निम्नलिखित दो सिद्धांतों को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

क) जटिल (कॉम्प्लेक्स) के लिए सरलः सीखने वाले को प्रेरित रखने के लिए सरल संदेश के साथ शुरू करना और धीरे–धीरे जटिल की ओर प्रगति करना बेहतर होता है।

ख) अज्ञात से ज्ञातः सान्द्र (ज्ञात) विषय के साथ शुरू करें और भावात्मक (अज्ञात) की ओर प्रगति करें।

6. अवधिः उपलब्ध समय के साथ अंतिम सामग्री का मिलान करने के लिए सामग्री को आगे आवश्यक, वांछनीय और संभव भागों में विभाजित किया जा सकता है। आवश्यक भाग वो हिस्सा होता है जिसको वर्णित किया ही जाना है और किसी भी माध्यम से ये श्रोताओं को दिए जाने चाहिए और यदि समय की अनुमति और आवश्यकता बनी रहती है, तो ही हम वांछनीय जानकारी दे सकते हैं और यदि संचारकर्ता के निपटान में अभी भी समय है तो हम संभव जानकारी से संबंधित चर्चा कर सकते हैं।

7. तकनीक / तरीकेः प्रसार वार्ता प्रतिपादन के समय एक प्रसार कार्यकर्ता को ये चार विशेष कार्य करने पड़ते हैंः–

i) समूह को प्रेरित करना

ii) विषय वस्तु प्रदान करना

iii) विचारों को स्पष्ट करना; तथा

iv) पुनरावृत्ति करना

इसलिए, यह अनुशंसा की जाती है कि वार्ता को चार चरणों में विभाजित किया जाना चाहिएः

प्रसार वार्ता का विभाजन

1. **उद्‌घाटन (परिचय):** वार्ता की शुरूआत शिक्षार्थी में रुचि पैदा करने और शिक्षार्थी को प्रेरित करने के लिए मन के अनुकूल मानसिक व्यवस्था या सही फ्रेम विकसित करने में मदद करती है। यह छोटा होना चाहिए और कुल उपलब्ध समय का केवल 10% इस चरण के लिए उपयोग किया जाता है। संचारक विषय का परिचय कराने के लिए निम्नलिखित में से किसी भी तरीके का उपयोग कर सकता हैः

i) वर्तमान नए सबक को पिछले सबक से संबंधित महत्वपूर्ण विचारों को पुनरूपयोग के साथ करके कड़ी जोड़े।

ii) आर्थिक / सांख्यिकीय डेटा का उपयोग करके वर्तमान सबक को महत्व दें।

iii) एक उपयुक्त केस स्टडी (व्यष्टि अध्ययन), कहानी उदाहरण आदि का वर्णन करें।

iv) बिना विवरण दिए नए विषय की मुख्य विशेषताएं प्रस्तुत करें।

2. **प्रधान भाग (प्रस्तुति):** इस भाग में संचारक विषय वस्तु प्रस्तुत करेंगे। यह शिक्षार्थियों की क्षमताओं और आवश्यकता के अनुसार होना चाहिए। कुल समय का 75% इस चरण के लिए उपयोग किया जाता है। विषय वस्तु प्रस्तुत करते समय संचारक को एक विचारोत्तेजक स्थिति बनाने की कोशिश करनी चाहिए और इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए उसे निम्नलिखित बिंदुओं को दिमाग में रखना चाहिए;

- विषय वस्तु को लघु इकाइयों (चरणों) में तोड़ें और उन्हें व्यवस्थित क्रम में रखें।
- अंतिम विषय वस्तु को आवश्यक वांछनीय और संभावित भागों में विभाजित करें।
- छोटे वाक्यों का प्रयोग करें।
- प्रस्तुति को तार्किक और रोचक बनाने के लिए उदाहरण चित्रण, उपाख्यान का हवाला दें।
- शिक्षार्थियों के अन्तर्भावन के लिए प्रश्न पूछें।
- उपयुक्त श्र्वय दृश्य सहायकों का उपयोग करके आवश्यक बिंदुओं पर जोर दें।

3. **सारांशः** पहले से सारांश तैयार करना और संदर्भ के लिए वार्ता की रूपरेखा (आउटलाइन) साथ में रखना हमेशा उपयोगी होता है। यह अगर संचारक ने एक

बार इसके लिए सारांश लिख दिया हो तो बात को बेहतर समझने में मदद करता है उसने। उपलब्ध समय का 5% इस उद्देश्य के लिए उपयोग होना चाहिए। सारांश में सभी प्रमुख बिंदुओं की पुनरावृत्ति नहीं होनी चाहिए। यह संक्षिप्त, सटीक, तार्किक और याद रखने में आसान होना चाहिए।

4. प्रश्नोतर: कुल समय का लगभग 10% इस चरण के लिए उपयोग किया जाना चाहिए। प्रसार वार्ता में प्रश्नों को इन महत्वपूर्ण उपकर्ण के रूप में इस्तेमाल किया जाता है–

- शिक्षार्थी को सक्रिय करने हेतु ।
- भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु ।
- रुचि जगाने हेतु ।
- योगदान कारक खोजने हेतु।
- सोच को जगाने हेतु ।
- डेटा इकट्ठा करने में मदद करता है
- हे चर्चा को शुरू करने में मदद करता है।
- चर्चा को नियंत्रित करता है।
- चर्चा समाप्त में मदद करता है।
- विषय बदने में मदद करता है।
- विषय के विकास में मदद करते हैं।

प्रश्नों के प्रकार: प्रश्न विभिन्न प्रकार के होते हैं जो विभिन्न स्थितियों में उपयोग किए जाते हैं:

क) साधारण: इसका उपयोग तब किया जाता है जब संचारक एक समय में सीखने वालों की अधिकतम संख्या का ध्यान आकर्षित करना या शामिल करना चाहता है, और कभी–कभी जब वह ये जानना चाहता है कि कितने शिक्षार्थियों को उत्तर पता है। ये हमेशा एक कम्युनिकेटर (संचारक) द्वारा समूह के अधिकांश सदस्यों के पास मौजूद ज्ञान का पता लगाने हेतु उपयोग किये जाते हैं।

ख) प्रत्यक्ष: इसका उपयोग तब किया जाता है जब संचारक किसी विशेष शिक्षार्थी के ज्ञान का परीक्षण करना चाहता है या उसका ध्यान आकर्षित करके उसे वार्ता में शामिल करना चाहता है। यह आम तौर पर संचारक और शिक्षार्थी दोनों द्वारा उपयोग किया जाता है। इस प्रकार के प्रश्न यदि बहुत बार उपयोग किये जाते हैं तो एक खतरनाक उपकरण बन जाते हैं।

ग) उल्टा प्रश्न या प्रश्न पे प्रश्न: रिवर्स प्रकार के प्रश्न का उपयोग तब किया जाता है जब संचारक को लगता है कि जिस व्यक्ति ने प्रश्न को प्रस्तुत किया है वह बहुत अच्छी तरह से उत्तर जानता है। ऐसी स्थितियों में, संचारक को शिक्षार्थी को स्वयं प्रश्न का उत्तर देने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

घ) हस्तांतरित प्रश्न: प्रश्नों को डालने की इस पद्धति का उपयोग तब किया जा सकता है जब संचारक स्वयं प्रतिक्रिया देने के लिए सक्षम नहीं होता है और जब वह सोचता है कि समूह के कुछ अन्य सदस्यों को उत्तर अच्छी तरह से पता है। फिर सवाल किसी अन्य शिक्षार्थी (जो सकारात्मक इशारा दिखा रहा है) को जवाब जानने के लिए पारित किया जाता है।

सवाल/प्रश्न करना भी एक कला है। इसके साथ संचारक को इस कला में अच्छी तरह से पारंगत होना चाहिए जिसके लिए निम्नलिखित प्रक्रिया को अपनाया जा सकता है।

- साफ–साफ बात करो
- शब्दों का चयन सावधानी से करें
- सवाल कम करो
- इरादा साफ करें
- जवाब मिलने की आशा है तो ही प्रश्न पूछें।
- उत्तर मिलने के लिए प्रतीक्षा करें ।

एक अच्छी प्रसार वार्ता की उपयोगिता को मापने का मानदंड यह है जिससे शिक्षार्थियों को बेहतर ज्ञान मिल सके ना की एक संचारक के द्वारा डाला गया बेहतर ज्ञान भंडार।

उड़ान भर रही महिलाएँ : नमो ड्रोन दीदी योजना

सौरभ पांडे[1], सुभाष कुमार सौरभ[2], श्रुति झाला[1] और आलोक दुबे[2]
[1]आणंद कृषि यूनिवर्सिटी, आणंद गुजरात–38110
[2]भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110 012

आर्थिक सर्वेक्षण 2023–2024 के अनुसार भारत की 64% महिलाएं कृषि संबंधित कार्यों से जुड़ी है। ऐसे में अत्यंत आवश्यक है की इन महिलाओं को कृषि में आधुनिक एवं यांत्रिकीकरण की ओर बढ़ावा दिया जाए। आजादी से पहले भी और वर्तमान युग में भी भारत सरकार ने महिलाओं को सशक्त बनाने मे कोई कसर नहीं छोड़ी है। महिलाओं के सतत विकास मे संवर्धन हो जिसके लिए अनूठी पहल करते हुए प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी जी के कार्यकाल में भारत सरकार ने एक ऐसी ही एक योजना 28 नवंबर 2023 को शुरू की गई जो ग्रामीण महिलाओं को सशक्त बनाने मे अपरिहार्य साबित हो रही है, वह नमों ड्रोन दीदी योजना है। भारत में करीब 10 लाख स्वयं सहायता समूह हैं जिसमें लगभग 10 करोड़ महिलाएं इस समूह का हिस्सा हैं। यह योजना "लखपति दीदी परियोजना" के तहत 1261 करोड़ रुपये के निवेश के साथ शुरू की गई है। महिला स्वयं सहायता समूहों (एसएचजी) को ड्रोन दिए जाएंगे ताकि वे अपनी आजीविका का समर्थन करने के लिए इस तकनीक का उपयोग कर सकें। यह योजना ग्रामीण महिलाओं को आत्मनिर्भरता हासिल करने में मदद करेगी और साथ ही कम श्रम में कार्य पूरा करने में मदद मिलेगी। यह बहुआयामी योजना ग्रामीण महिलाओं के हाथों में अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी देकर हमारी कृषि पद्धतियों को आधुनिक बनाने तथा कृषि उत्पादकता बढ़ाने की आवश्यकता को प्रभावी ढंग से पूरा करती है। यह योजना कृषि एवं किसान कल्याण विभाग (डीएएंडएफडब्ल्यू), ग्रामीण विकास विभाग (डीओआरडी), उर्वरक विभाग (डीओएफ), महिला स्वयं सहायता समूहों और प्रमुख उर्वरक कंपनियों (एलएफसी) के संसाधनों और प्रयासों को एकीकृत करके समग्र हस्तक्षेप को मंजूरी देती है। यह योजना देश के सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए महत्त्वपूर्ण है।

नमो ड्रोन दीदी योजनाः इस योजना के तहत ग्रामीण महिलाओं को सशक्त बनाना और वित्तीय सहायता प्रदान करना है। कृषि कार्यों के उदेश्य से महिलाओं को ड्रोन पायलट बनने में प्रशिक्षण देकर सशक्त बनाना है। इस योजना के तहत 15,000, स्वयं सहायता समूहों जिनका नेतृत्व महिलाओं द्वारा किया जाता है, उनको ड्रोन से लैस करना है, जिसके परिणाम स्वरूप, बीज बोने, फसलों की निगरानी करने, कीटनाशक और उर्वरकों के छिड़काव जैसे विविन्न कृषि संबंधित कार्यों में सहायता कर सकें। इस योजना के तहत 15,000 स्वयं सहायता समूहों से जुड़ी महिलाओं को इफको द्वारा ड्रोन को प्रयोग में लाने के लिए प्रशिक्षण दिया जायेगा। किसान उत्पादन संगठन (FPO) के किसान सदस्य अपने खेतों में किराए से उर्वरक एवं कीटनाशक का छिड़काव करवा सकेंगे।

योजना के लाभार्थीः नमो ड्रोन दीदी योजना का लाभ लेने के लिए महिलाओं के लिए कुछ नियम बनाए गए हैं जैसे महिला के पास भारत देश की नागरिकता का होना, महिला की उम्र 18 से 37 वर्ष के बीच मे होना और सबसे महत्वपूर्ण बात महिला की स्वयं सहायता समूह में सक्रिय भागीदारी का होना अनिवार्य है। लगभग 10–15 ग्राम सभा में से एक चयनित महिला को ड्रोन चलाने के लिए 15 दिनों का प्रशिक्षण दिया जाएगा, जिसके पश्चात उसे प्रतिमाह 15000 रुपए वेतन भी दिया जाएगा।

वित्तीय सहायताः ड्रोन की लागत का 80% (अधिकतम 8 लाख रुपये तक) कवर करने वाली केंद्रीय वित्तीय सहायता प्रदान की जाएगी। शेष राशि राष्ट्रीय कृषि अवसंरचना वित्तपोषण सुविधा (एआईएफ) के माध्यम से जुटाई जा सकती है, जिसमें एआईएफ ऋण पर 3% की दर से ब्याज सहायता का प्रावधान है।

योजना के लाभः विशेष तौर पर यह योजना ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण और उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए लाया गया मगर इसके और भी अनेकों फायदें है।

ग्रामीण महिलाओं का सशक्तिकरणः कृषि कार्यों के लिए महिला आधारित स्वयं सहायता समूह, किसानों को किराए पर ड्रोन उपलब्ध करा कर ग्रामीण क्षेत्र में आर्थिक विकास कर सकती हैं। यह योजना महिलाओं को कृषि कार्यों में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए आवश्यक कौशल और उपकरण प्रदान करके सशक्त बनाती है। यह निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में उनकी भूमिका को बढ़ाता है, लैंगिक समानता को बढ़ावा देता है और उनके आर्थिक सशक्तिकरण में योगदान देता है। महिलाओं का आर्थिक एवं सामाजिक विकास के साथ साथ वित्तीय लाभ में भी बढ़ोतरी होगी, महिलाएं अपने बच्चों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनेगी एवं नई पीढ़ी का विकास होगा।

कृषि यांत्रिकीकरणः देश के 89% किसान लघु और सीमांत की श्रेणी में आते हैं जो ड्रोन नहीं खरीद सकते हैं। ऐसे में किराए पर ड्रोन उपलब्ध होने से छोटे और सीमांत किसान भी वैज्ञानिक उपकरणों का प्रयोग करके पैदावार बढ़ा सकेंगे। कृषि में ड्रोन का उपयोग कृषि पद्धतियों में क्रांति ला सकता है। ड्रोन फसल की निगरानी, कीट नियंत्रण और परिशुद्ध कृषि में मदद कर सकते हैं, जिससे उत्पादकता में वृद्धि होगी और पर्यावरणीय पर इसका प्रभाव भी कम होगा। ड्रोन प्रौद्योगिकी की मदद से, आधुनिक और कुशल कृषि तकनीकों को बढ़ावा मिल रहा है। ड्रोन का उपयोग करके, कीटनाशकों, डीएपी और यूरिया के नकारात्मक प्रभावों को कम किया जा सकता है और उर्वरक की मात्रा को अनुकूलित किया जा सकता है।

रोजगार में अवसरः ड्रोन संचालन और रखरखाव में ग्रामीण महिलाओं के लिए रोजगार का सृजन, स्वदेशी ड्रोन वैमानिकी विकास के लिए सरकार के प्रयासों को समर्थन। फसल की निगरानी, उर्वरकों का छिड़काव और बीज बोने जैसे कार्यों को स्वचालित करके, ड्रोन कृषि कार्यों की श्रम तीव्रता को कम करते हैं। यह विशेष रूप से महिलाओं के लिए फायदेमंद है, जो अक्सर ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि कार्य का महत्वपूर्ण बोझ उठाती हैं।

खेती में सुरक्षा और दक्षताः कीटनाशकों और उर्वरकों के छिड़काव के लिए हाथ से चलने वाले पंप जैसे पारंपरिक, खतरनाक तरीकों की जगह, जोखिम कम करने और दक्षता बढ़ाने के लिए। इससे फसल की पैदावार बढ़ेगी और किसानों के लाभ के लिए संचालन की लागत कम होगी। जरूरत के हिसाब से, उचित मात्रा में कृषि आवश्यक रसायनों का इस्तेमाल होने से पर्यावरण को कम से कम हानि होगी।

सामाजिक–आर्थिक विकासः भारत UN-SDG को हासिल करने का लगातार प्रयास कर रहा है और यह योजना 17 सतत विकास लक्षयांक में से कई सारे जैसे SDG-5ः लैंगिक समानता, SDG-8ः आर्थिक विकास और उत्कृष्ट कार्य और SDG-10ः असमानताओं में कमी आदि को हासिल करने मे उपयोगी है।

पहाड़ी क्षेत्रों में उपयोगिताः पहाड़ी राज्य जैसे आसाम एवं मिजोरम इत्यादि उत्तर पूर्वी राज्यों के पहाड़ी इलाकों में जो किसान सीढ़ी नुमा खेती करते हैं, उन्हें ड्रोन की मदद से उर्वरक एवं कीटनाशक का छिड़काव करने में सुविधा रहेगी और इन राज्यों में भी खेती का विकास होगा। इससे वंचित क्षेत्रों में भी स्वयं सहायता समूह से जुड़ी महिलाएं विकास की ओर बढ़ेंगी और ज्यादा से ज्यादा किसान, किसान उत्पादक संगठन का हिस्सा बनेंगे।

महिला सशक्तिकरण से समाज का उत्थानः महिला सशक्तिकरण, महिलाओं द्वारा अपने जीवन पर नियंत्रण हासिल करने, विकल्प चुनने और सामाजिक परिवर्तन को प्रभावित करने की प्रक्रिया है। महिलाओं के संवर्धन के लिय उनका सशक्त होना अपरिहार्य है। परिवार, समाज और देश के सतत विकास में महिलाओं का विशेष योगदान होता है। महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण से आर्थिक

विविधीकरण, आय समानता और समृद्धि बढ़ सकती है। यह महिलाओं की श्रम उत्पादकता और कार्यबल में भागीदारी को बढ़ाकर देशों को बढ़ने में भी मदद कर सकता है। महिला सशक्तिकरण उन सामाजिक मानदंडों, दृष्टिकोणों और प्रथाओं को चुनौती दे सकता है और बदल सकता है जो महिलाओं के अधिकारों और अवसरों को सीमित करते हैं। महिला सशक्तिकरण, महिलाओं को खुशहाल और बच्चे के स्वस्थ पालन पोषण में भी मददगार साबित होती है। जब महिलाएं सशक्त होती हैं, तो वे भुगतान, स्थिर रोजगार प्राप्त करने में सक्षम होती हैं, गरीबी दर कम होती है, खाद्य असुरक्षा कम होती है, और उनके परिवार की स्थिरता, पोषण और समग्र कल्याण मे बढ़ोतरी होती है।

'नमो ड्रोन दीदी पहल' कृषि में महिलाओं को सशक्त बनाने, उत्पादकता बढ़ाने और सतत् विकास को बढ़ावा देने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। आलोचनाओं के बावजूद, कौशल विकास, वित्तीय सहायता और तकनीकी उन्नति पर योजना का ध्यान ग्रामीण आजीविका और कृषि प्रथाओं को बदलने की इसकी क्षमता को रेखांकित करता है।

सुझावः अगर ड्रोन को किराए पर उपलब्ध करवाने के साथ साथ नैनो फर्टिलाइज़र को भी प्रोत्साहन दिया जाए तो पूर्णतः सतत विकास की ओर प्रगति होगी, किन्तु इस योजना के व्यापक लाभ साकार करने के लिए ग्रामीण विस्तार में ग्रामीण लोगों को जानकारी देने के लिए विस्तरण अधिकारी को सक्रीय होकर कार्य करना होगा। इस योजना की जानकारी गाँव—गाँव तक पहुचानी होगी जिससे ग्रामीण लोग अपने विकास के प्रति प्रोत्साहित हों और भारत देश 2047 तक विकसित भारत का लक्ष्य हासिल कर सके।

भारत में पुष्प किण्वनः संभावनाओं का अनोखा क्षेत्र

चेतना पाठक[1], कामिनी बिष्ट[2], सीमा नाबेरिया[1] एवं अभिजीत कुडेरिया[1]
[1]जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर–482004 – (म.प्र.)
[2]भा.कृ.अनु.प.–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान, संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड

पुष्प किण्वन एक प्राचीन प्रक्रिया है, जो न केवल भारतीय संस्कृति का अभिन्न हिस्सा है, बल्कि आधुनिक विज्ञान और उद्योग में भी नई संभावनाओं का द्वार खोलती है। यह प्राचीन तकनीक आधुनिक खाद्य और पेय उद्योग में एक नया मोड़ ले रही है, जो भारतीय बाजार में अपार संभावनाएं प्रदान कर रही है। इसमें हम भारत में पुष्प किण्वन के महत्व, उसकी प्रक्रियाओं और भविष्य की संभावनाओं पर चर्चा करेंगे।

पुष्पीय किण्वन क्या है?

पुष्पीय किण्वन एक प्रक्रिया है जिसमें फूलों को सूक्ष्मजीवों की मदद से किण्वित किया जाता है। इस प्रक्रिया के दौरान, फूलों के रंग, सुगंध और पोषक तत्व संरक्षित रहते हैं, जबकि नए और जटिल स्वाद विकसित होते हैं। यह तकनीक न केवल फूलों के स्वाद को बढ़ाती है, बल्कि उनकी शेल्फ लाइफ को भी बढ़ाती है।

Source: freepick.com

भारत में पुष्प किण्वन का इतिहास

भारत में पुष्प किण्वन की परंपरा प्राचीन काल से चली आ रही है, जहां गुलाब का सिरका और जूही का रस जैसे किण्वित पेय विशेष अवसरों और आयुर्वेदिक उपचारों में उपयोग किए जाते थे। यह न केवल भारतीय खाद्य संस्कृति को समृद्ध करता है, बल्कि औषधीय गुणों के कारण पाचन सुधारने, रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने और त्वचा की देखभाल में भी सहायक माना जाता रहा है। पुष्प किण्वन की यह परंपरा आधुनिक शोध और नवाचार के साथ आगे बढ़ रही है, जो इसे स्वास्थ्य और स्वाद के नए आयामों तक ले जा रही है।

पुष्प किण्वन की प्रक्रिया

पुष्प किण्वन का अर्थ है फूलों का उपयोग करके खाद्य और पेय पदार्थों का निर्माण करना। यह प्रक्रिया मुख्य रूप से चार चरणों में होती हैः

1. **सामग्री का चयनः** विभिन्न प्रकार के फूल जैसे गुलाब, किन्नू, और जूही का चयन किया जाता है, जिनमें सुगंध और स्वाद दोनों होते हैं। जैसेः–
   a) गुलाबः गुलाब की पंखुड़ी वाली शराब या गुलाब जल कोम्बुचा।
   b) लैवेंडरः लैवेंडर मीड या लैवेंडर नींबू पानी।
   c) हिबिस्कसः हिबिस्कस चाय कोम्बुचा या हिबिस्कस सिरका।
   d) चमेलीः चमेली हरी चाय कोम्बुचा या चमेली वाइन।
   e) डेन्डेलियनसः यह वाइन या सिंहपर्णी सिरका।
   f) कैमोमाइलः कैमोमाइल मीड या कैमोमाइल कोम्बुचा।
   g) बैंगनीः बैंगनी मदिरा या बैंगनी सिरप।
   h) मैरीगोल्ड्सः मैरीगोल्ड वाइन या गेंदे का सिरका।
   i) गुलदाउदीः गुलदाउदी चाय, वाइन या गुलदाउदी सिरका।

ये उदाहरण पुष्प किण्वन की बहुमुखी प्रतिभा को

दर्शाते हैं, जिसमें मादक पेय पदार्थों जैसे वाइन से लेकर गैर–अल्कोहलिक विकल्प जैसे कोम्बुचा और सिरका शामिल हैं, प्रत्येक अपने संबंधित फूल के अद्वितीय सार और स्वाद प्रोफ़ाइल को संजोता है।

2. **तैयारी (Preparation):** चुने गए फूलों को अच्छी तरह से धोया जाता है ताकि उन पर लगे धूल, मिट्टी और अन्य अशुद्धियाँ दूर हो सकें। फूलों को धोने के बाद, उन्हें छायादार स्थान पर सुखाया जाता है ताकि उनमें नमी की मात्रा नियंत्रित रहे और किसी भी अनावश्यक जीवाणु या कीटों को हटाया जा सके। इस प्रक्रिया से यह सुनिश्चित किया जाता है कि फूलों में मौजूद प्राकृतिक खमीर (लमेंज) को सक्रिय करने के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार हो।

3. **किण्वन (Fermentation):** सुखाए गए फूलों को एक बड़े स्वच्छ बर्तन में रखा जाता है। इसके बाद, उनमें आवश्यक मात्रा में पानी और चीनी मिलाई जाती है। चीनी खमीर को सक्रिय करने और अल्कोहल उत्पादन की प्रक्रिया को बढ़ाने के लिए जरूरी होती है। मिश्रण को ढक्कन से ढककर कुछ दिनों (आमतौर पर 7–10 दिन) के लिए रखा जाता है ताकि प्राकृतिक खमीर सक्रिय हो सके। इस दौरान, मिश्रण में गैस बुलबुले उठने लगते हैं, जो संकेत देता है कि किण्वन की प्रक्रिया शुरू हो चुकी है। मिश्रण को समय–समय पर हिलाना या हल्के से मिलाना जरूरी होता है ताकि खमीर ठीक से काम कर सके और समान रूप से किण्वन हो।

4. **फिल्टरिंग और संग्रहण:** जब किण्वन प्रक्रिया पूरी हो जाती है (आमतौर पर 2–3 सप्ताह बाद), तो मिश्रण को छानकर उसमें से ठोस पदार्थ (फूलों के टुकड़े) अलग कर दिए जाते हैं। छानने की प्रक्रिया के लिए महीन सूती कपड़ा, छलनी, या फ़िल्टर पेपर का उपयोग किया जा सकता है। छने हुए तरल मिश्रण को साफ और निष्फल (sterilized) बोतलों में भरकर संग्रहित किया जाता है। संग्रहण के दौरान बोतलों को ठंडी और अंधेरी जगह पर रखना बेहतर होता है ताकि स्वाद और गुणवत्ता बनी रहे। इस पेय को कुछ हफ्तों या महीनों तक परिपक्व (mature) होने के लिए रखा जाता है, जिससे इसका स्वाद और सुगंध और भी बेहतर हो जाता है।

Source: thecookierookie.com

Source: hotteamama.com

पुष्पीय किण्वनः संभावनाएं एवं चुनौतियां

संभावनाएंः

1. **स्वास्थ्य लाभः** पुष्पीय किण्वित उत्पादों में प्रीबायोटिक्स और एंटीऑक्सिडेंट्स की प्रचुरता होती है, जो स्वास्थ्य के लिए अत्यधिक लाभकारी हैं।
2. **नवाचार और अनुसंधानः** नए जैव–तकनीकी अनुप्रयोगों और अनुसंधान से इस क्षेत्र में अत्यधिक संभावनाएं उत्पन्न हो रही हैं, जो नई उत्पाद विकास की दिशा में मार्गदर्शन प्रदान कर सकती हैं।
3. **विकसित बाजार और निर्यात के अवसरः** पुष्पीय किण्वित उत्पादों की वैश्विक बाजार में बढ़ती मांग, विशेष रूप से किण्वित फूलों से बने चाय और ड्रिंक्स, निर्यात की संभावनाओं को बढ़ाती है। भारत में खाद्य और पेय उद्योग का तेजी से विस्तार हो रहा है, जो उपभोक्ताओं को आकर्षित करने वाले नए और अद्वितीय उत्पादों की संभावना को बढ़ाता है।
4. **सतत् कृषि और मूल्य संवर्धनः** पुष्पीय किण्वन फूलों की खेती को प्रोत्साहित करता है, जिससे किसानों को अतिरिक्त आय का स्रोत मिलता है और कृषि के सतत् विकास को बढ़ावा मिलता है।
5. **पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक प्रौद्योगिकी का समावेशः** भारत में पारंपरिक किण्वन विधियों को आधुनिक तकनीकों से जोड़कर नवाचार और विकास की नई दिशा दी जा सकती है।
6. **पर्यावरण संरक्षणः** पुष्प किण्वन में फूलों और पौधों के अवशिष्ट हिस्सों का उपयोग किया जा सकता है, जिससे अपशिष्ट में कमी आती है और जैव विविधता को बढ़ावा मिलता है, इस प्रकार पर्यावरण की सुरक्षा में योगदान होता है।
7. **सांस्कृतिक समृद्धिः** पुष्प किण्वन हमारे सांस्कृतिक धरोहर को समृद्ध करता है, जिससे पारंपरिक ज्ञान को पुनर्जीवित किया जा सकता है और इसे आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचाया जा सकता है।

चुनौतियांः

1. **तकनीकी ज्ञान की कमीः** पुष्पीय किण्वन की प्रक्रियाओं पर वैज्ञानिक शोध और जागरूकता की कमी है, जिससे इस क्षेत्र का विकास बाधित हो सकता है।
2. **भंडारण और शेल्फ लाइफः** पुष्पीय किण्वित उत्पादों की शेल्फ लाइफ सीमित होती है, और इसके लिए उपयुक्त भंडारण प्रणाली की आवश्यकता होती है, ताकि उत्पाद की ताजगी बनी रहे।
3. **नियामक बाधाएंः** खाद्य सुरक्षा मानकों और नियामक आवश्यकताओं का पालन करना एक बड़ी चुनौती हो सकती है, जो इस उद्योग के विकास को प्रभावित कर सकता है।
4. **बाजार स्वीकृतिः** उपभोक्ताओं में पुष्पीय किण्वित उत्पादों की जागरूकता और स्वीकार्यता बढ़ाने के लिए प्रभावी विपणन और प्रचार की आवश्यकता है।
5. **जागरूकता की कमीः** उपभोक्ताओं और उद्यमियों को इस नई तकनीक के बारे में शिक्षित करने की आवश्यकता है, ताकि वे इसके लाभ और संभावनाओं को समझ सकें।
6. **गुणवत्ता नियंत्रणः** सुरक्षित और स्वादिष्ट उत्पादों को सुनिश्चित करने के लिए सख्त गुणवत्ता मानकों की आवश्यकता है, जिससे उपभोक्ताओं का विश्वास बना रहे।
7. **अनुसंधान और विकासः** भारतीय फूलों के लिए उपयुक्त किण्वन तकनीकों को विकसित करने के लिए और अधिक शोध की आवश्यकता है, ताकि स्थानीय बाजार की जरूरतों को पूरा किया जा सके।

निष्कर्ष

पुष्प किण्वन पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक विज्ञान के संगम का उत्कृष्ट उदाहरण है, जो भारतीय संस्कृति की समृद्धि को दर्शाता है। इस क्षेत्र में शोध और नवाचार की अपार संभावनाएँ हैं, जिन्हें आधुनिक दृष्टिकोण से अपनाकर इसके लाभों को अधिकतम किया जा सकता है। यह प्रक्रिया न केवल स्वास्थ्यवर्धक और पर्यावरण–संवेदनशील समाधान प्रदान करती है, बल्कि हमारी सांस्कृतिक धरोहर को भी संरक्षित करती है। पुष्प किण्वन को प्रोत्साहित करके हम एक स्वस्थ, समृद्ध और सतत् भविष्य की दिशा में महत्वपूर्ण कदम बढ़ा सकते हैं।

पादप ऊतक संवर्धन तकनीक से स्वरोजगार एवं रोग मुक्त उन्नत पौध उत्पादन

[1]संजय सिरोही, [1]एन. वी. सिंह, [2]एस. सी. राणा एवं [1]डी. पी. सिंह
[1]भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110 012
[2]भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय स्टेशन, करनाल

किसानों के पास कृषि भूमि की कमी और उत्पादन दर में गिरावट जैसी समस्याएँ लगातार बढ़ रही हैं। जलवायु परिवर्तन, कीटों और रोगों के प्रभाव, तथा उपयुक्त पौधों की किस्मों की कमी इन समस्याओं को और गंभीर बना रही हैं। इन कारणों से किसानों को आर्थिक नुकसान हो रहा है और युवा पीढ़ी कृषि में रुचि खो रही है। पादप ऊतक संवर्धन तकनीक के माध्यम से किसानों को फसल रोगों से बचाव और पौधों की गुणात्मक वृद्धि सुनिश्चित की जा सकती है। यह तकनीक पौधों को अधिक उत्पादन देने की क्षमता प्रदान करती है और ऐसी किस्मों को तैयार किया जा सकता है जो जलवायु परिवर्तन और विभिन्न पर्यावरणीय परिस्थितियों के प्रति सहनशील हों, जिससे कृषि फसलों का उत्पादन बढ़ेगा और किसानों को बेहतर बाजार मूल्य मिलेगा। इसके अलावा, यह तकनीक कृषि क्षेत्र में आत्मनिर्भरता और रोजगार के नए अवसर भी उत्पन्न करती है। पादप ऊतक संवर्धन तकनीक से फलदार और सजावटी पौधों की नर्सरी व्यवसाय युवाओं और कृषि छात्रों के लिए स्वरोजगार का एक अच्छा विकल्प बन सकती है। यह पारंपरिक पौधों के प्रवर्धन विधियों की तुलना में अधिक लाभकारी है।

पादप ऊतक संवर्धन (Plant Tissue Culture) एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है, जिसमें पौधों के ऊतकों से नियंत्रित और संरक्षित वातावरण में पूरी तरह से विकसित पौधे तैयार किए जाते हैं। इसके द्वारा अनार, केला, खजूर, शीशम, ऑयल पाम, ग्लेडिओलस और अन्य बागवानी फसलों के उच्च गुणवत्ता वाले पौधों का बड़े पैमाने पर (Mass Production) उत्पादन कम समय में किया जा सकता है। पादप ऊतक संवर्धन तकनीक से रोग मुक्त एवं उच्च गुणवत्ता वाले पौधे किसानों की आवश्यकता के अनुसार उपलब्ध कराये जा सकते है इन पौधों की राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय बाजार में भारी मांग है।

टिशू कल्चर लैब की स्थापना (Establishment of Tissue Culture Lab): टिशू कल्चर लैब की स्थापना के लिए ऐसे स्थान का चुनाव करना चाहिए जहाँ बिजली एवं पानी की समुचित व्यवस्था हो। प्रदूषण से बचने के लिए ग्रामीण क्षेत्र को प्राथमिकता देनी चाहिए। लैब की स्थापना के लिए तकनीकी ज्ञान और प्रशिक्षण का होना बहुत जरूरी है, लैब आरंभ करने से पहले किसी कृषि विज्ञान केंद्र (के.वी.के), कृषि विश्वविद्यालय या कृषि अनुसंधान संस्थान से प्रशिक्षण और तकनीकी जानकरी अवश्य प्राप्त कर लेनी चाहिए।

प्रयोगशाला के लिए आवश्यक उपकरण

1. लेमिनार एयरफ्लो चेंबर (Laminar Airflow Chamber)
2. आटोक्लेव (Autoclave)
3. माइक्रोस्कोप (Microscope)
4. पीएच मीटर (pH meter)
5. रेफ्रिजरेटर और डीप फ्रीजर (Refrigerator and Deep Freezer)
6. इनक्यूबेटर (Incubator)
7. ग्रोथ चेंबर (Growth Chamber)
8. कल्चर कंटेनर (Culture Container)
9. जल आसवन इकाई (Water Distillation Unit)
10. प्रेसिजन इलेक्ट्रॉनिक बैलेंस (Precision Electronic Balance)

टिशू कल्चर प्रयोगशाला का प्रमाणीकरण (Certification of Tissue Culture Lab):

प्रयोगशाला स्थापित करने के बाद उसकी गुणवत्ता और तकनीकी क्षमता को प्रमाणित कराने के लिए पंजीकरण और प्रमाणीकरण आवश्यक है। भारत सरकार के विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय के तहत National Certification System for Tissue Culture Raised Plants (NCS-TCP) या राष्ट्रीय परीक्षण और अंशांकन प्रयोगशाला प्रत्यायन बोर्ड (NABL)– जैव प्रौद्योगिकी विभाग, संस्थानों से प्रयोगशाला प्रमाणीकरण कराया जा सकता है। प्रमाणीकरण प्रक्रिया के अंतर्गत, संबंधित एजेंसी के अधिकारी द्वारा प्रयोगशाला में उत्पादित पौधों, लैब की साफ सफाई, उपकरण और गुणवत्ता का निरीक्षण करने के बाद प्रयोगशाला को प्रमाणित किया जाता हैं। प्रमाणित प्रयोगशालाओं में उगाए गए पौधों की विश्वसनीयता अधिक रहती है और पौधों की बाजार में अच्छी कीमत मिलती है।

लैब की स्थापना के लिए अनुमानित लागत (Estimated Cost For Tissue Culture Lab):

टिशू कल्चर लैब स्थापित करने के लिए आवश्यक निवेश लैब के आकार पर निर्भर करता है। मध्यम आकार की लैब स्थापित करने में अनुमानन रु० 20–25 लाख धनराशि की आवश्यकता होती है (इसमें जमीन एवं श्रमशक्ति पर व्यय सम्मलित नहीं है) कृषि क्षेत्र में युवाओं के स्वरोजगार और किसानों की आय दोगुनी करने के लिए भारत सरकार द्वारा कई योजनाएं चलाई जा रही हैं, जिनमें सब्सिडी और कम ब्याज दरों पर ऋण प्रदान कराने का प्रावधान है।

आवश्यक सामान	लागत
लैमिनर एयरफ्लो कैबिनेट	3–5 लाख, (2–संख्या)
एयरकंडीशनर	2.5–3 लाख, (4–संख्या)
रेफ्रिजरेटर	1–2 लाख
आटोक्लेव	2–3 लाख, (2–संख्या)
प्रेसिजन इलेक्ट्रॉनिक बैलेंस	1 लाख
ग्रोथ चौंबर और कैस्टर रैक	2–3 लाख
pH मीटर और अन्य उपकरण	50,000–1 लाख
रसायन, माध्यम (Medium) एवं ग्लासवेयर	3–4 लाख (वार्षिक)
जल आसवन ईकाई/जल शुद्धिकरण ईकाई	2 लाख
माइक्रोस्कोप	₹40,000–₹1 लाख
फर्नीचर और अन्य इंफ्रास्ट्रक्चर	50,000–1.5 लाख
बिजली इत्यादि	2–3 लाख (वार्षिक)

कुल अनुमानित निवेशः 19.9 – ₹ 29.5 लाख

ऊतक संवर्धन प्रक्रिया (Tissue Culture Process): टिशू कल्चर प्रक्रिया के अंतर्गत पौधों को प्रयोगशाला में तैयार करने के लिए कई चरण होते हैं। सबसे पहले फील्ड से नमूने (Explant) का चयन किया जाता है। एक्सप्लांट के लिए तना, पत्ती, जड़, कली या बीज का प्रयोग किया जा सकता है यह ध्यान रखे कि लिया गया एक्सप्लांट स्वस्थ और रोग मुक्त होना चाहिए। संक्रमण को फैलने से रोकने के लिए अल्कोहल, हाइड्रोजन पेरोक्साइड, या सोडियम हाइपोक्लोराइट से एक्सप्लांट को रोगाणुरहित (Sterilization) किया जाता है। एक्सप्लांट के विकास के लिए आवश्यक पोषक तत्व, हार्मोन, कार्बोहाइड्रेट से युक्त जैसे सुक्रोज और आगार से संवर्धन माध्यम (Culture Medium) तैयार किया जाता है। मीडिया मे आगार (Agar) छोटे पौधों को स्थिरता देता है। संक्रमण से बचने के लिए

लेमिनर एयरफ़्लो के अंदर तैयार माध्यम में एक्सप्लांट को सावधानीपूर्वक स्थानांतरित करके इनोक्यूलेशन (Inoculation) किया जाता है यहाँ कोशिकाएँ विभाजित होती हैं और कैलस बनाती हैं और पौधे के नए अंगों के विकास की प्रक्रिया शुरू होती है।

उत्तक संवर्धन के चरणः–

1. **मातृ वृक्ष का रख रखाव एवं प्लांट संशोधनः** मातृ वृक्ष वे मुख्य पौधे होते हैं जिनसे एक्सप्लांट लिया जाता है। इन पौधों को स्वस्थ, रोगमुक्त, और उच्च गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए विशेष देखभाल की आवश्यकता होती है। इसके लिए नियमित रूप से पोषण प्रबंधन, कीट एवं रोग नियंत्रण का ध्यान रखा जाता है।
2. **कल्चर स्थापन (Culture Establishment):** इस प्रक्रिया में पौधों के भाग (एक्सप्लांट) को रोगाणु मुक्त वातावरण में पोषक माध्यम में स्थापित किया जाता है। इस दौरान एक्सप्लांट को सतह निष्क्रियता के माध्यम से संक्रमण मुक्त किया जाता है। इसे विशेष पोषक तत्वों, हार्मोन और विटामिन से युक्त माध्यम में रखा जाता है, जो कोशिका विभाजन और विकास की शुरुआत करता है।
3. **इन विट्रो गुणन (In Vitro Multiplication):** इन विट्रो गुणन वह चरण है जिसमें पौधे की कोशिकाओं का तीव्र विभाजन होता है, जिससे बड़ी संख्या में नए पौधे तैयार किए जा सकते हैं। इस प्रक्रिया में साइटोकाइनिन और ऑक्सिन जैसे हार्मोन का उपयोग करके पौधों के विकास को प्रोत्साहित किया जाता है।
4. **इन विट्रो जडन (In Vitro Rooting):** इस प्रक्रिया में जड़ों के विकास को प्रोत्साहित करने के लिए विशेष रूप से आई.बी.ए. जैसे पौध हार्मोन का उपयोग किया जाता है। जब जड़ें पर्याप्त रूप से विकसित हो जाती हैं तो पौधों को प्राकृतिक परिस्थितियों में स्थानांतरित करने के लिए तैयार किया जाता है।
5. **कठोरीकरण/अनुकूलन (Hardening):** पौधों को खेत मे रोपित करने और बाजार में भेजने से पहले छोटे पौधों को प्रयोगशाला के बाहर प्राकृतिक परिस्थितियों के अनुकूल बनाया जाता है ताकि पौधे प्राकृतिक वातावरण में अजैविक और जैविक तनावों को सहन करने में सक्षम हो सकें। पौधों को धीरे–धीरे बाहरी वातावरण में लाया जाता है, उन्हें दो सप्ताह तक आंशिक छाया में रखा जाता है, जिसके बाद पौधों को थोड़ा–थोड़ा करके धूप और हवा के संपर्क में लाया जाता है। तीन सप्ताह के बाद पौधों को खुले वातावरण में छोड़ दिया जाता है और पानी की मात्रा भी कम कर दी जाती है ताकि पौधे अपनी जड़ों से पानी सोखना शुरू कर दें और उनकी जड़ें विकसित हो जाएं। छोटे पौधों को खेत में दोपहर बाद रोपने से उनकी मृत्यु दर कम होती है, क्योंकि रात में वातावरण हल्का और अनुकूल रहता है।

   a. **प्राथमिक अनुकूलन (Primary Hardening):** प्राथमिक अनुकूलन में टिशू कल्चर लैब से निकाले गए पौधों को ग्रीनहाउस या नर्सरी में नियंत्रित वातावरण में विशेष रूप से तैयार गमलों या ट्रे में लगाया जाता है। पौधों को बाहरी वातावरण के संपर्क में लाने के लिए तैयार किया जाता है।

   b. **द्वितीयक अनुकूलन (Secondary Hardening):** द्वितीयक अनुकूलन प्राथमिक अनुकूलन के बाद का चरण है, जिसमें पौधों को खुली नर्सरी या खेत में प्राकृतिक परिस्थितियों में स्थानांतरित किया जाता है। पौधों को द्वितीयक कठोरीकरण (Secondary Hardening) के दौरान सूक्ष्म जीवों, जैसे राइजोबियम, माइकोराइजा कवक या अन्य सहजीवी बैक्टीरिया को पौधों की जड़ों और पत्तियों (फायलोस्पीयर) में संरोपण किया जाता है। जिसे जैव कठोरीकरण (Biological Hardening) कहते है। इससे पौधों की प्रतिरोधक क्षमता और बढ़वार में वृद्धि होती है और पौधे अधिक मजबूत और स्वस्थ बनते है।

टिशू कल्चर लैब में धूमन या धूम्रीकरण (Fumigation in Tissue Culture Labs): टिशू कल्चर लैब में धूमन या धूम्रीकरण एक कीटाणुशोधन प्रक्रिया है जिसका मकसद प्रयोगशाला को सूक्ष्मजीवरहित करना होता है. संदूषण बढ़ने पर हर दो महीने में धूम्रीकरण करना चाहिए। धूमन

के दौरान, प्रयोगशाला को पूरी तरह से सील कर दिया जाता है ताकि धूमन का प्रभाव कमरे के हर कोने तक पहुँचे और वाष्प या गैस कमरे से बाहर न निकल सके। धूम्रीकरण (Fumigation) प्रयोगशाला को सूक्ष्मजीव रहित बनाए रखने के लिए नियमित अंतराल पर किया जाता है।

वायरस अनुक्रमण (Virus Indexing): टिशू कल्चर तकनीक के माध्यम से उगाए गए पौधों की नर्सरी में वायरस इंडेक्सिंग एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। पौधों में वायरस की पहचान करने और उन्हें रोकने के लिए नियमित रूप से पौधों का परीक्षण किया जाता है। वायरस का समय पर पता लगने से किसानों को गंभीर नुकसान से बचाया जा सकता है।

वायरस इंडेक्सिंग के लिए, कई तरह की तकनीकों का इस्तेमाल किया जाता हैः–

1. ELISA (एंजाइम–लिंक्ड इम्यूनोसॉर्बेंट एस्से)
2. इम्यूनो–स्ट्रिपटेस्ट
3. पॉलिमरेज़ चेन रिएक्शन (Polymerase Chain Reaction - PCR)
4. RT-PCR
5. रीयल–टाइम पी.सी.आर (qPCR)

आनुवंशिक सत्य निष्ठा परीक्षणः सूक्ष्म प्रवर्धित पौधे आनुवंशिक रूप से मात्र वृक्ष के समान होने चाहिए, इसकी पुष्टि के लिए आनुवंशिक सत्य निष्ठा (Genetic Fidelity) का परीक्षण आण्विक चिन्हकों (Molecular Marker) की मदद से किया जा सकता है।

टिशू कल्चर तकनीक के लाभः

- सूक्ष्म प्रवर्धित पौधों की आनुवंशिक समानता के कारण उनका विकास और आकार एक समान होता है, जो कृषि मशीनीकरण के लिए उपयुक्त रहता है।
- इन पौधों में पुष्पन और फलन भी जल्दी शुरू हो जाता हैं, जिससे किसानों को शीघ्र उत्पादन मिलने लगता है।
- जो पौधे प्राकृतिक परिस्थितियों में उगाने में कठिन होते हैं, उन्हें प्रयोगशाला में सफलतापूर्वक विकसित किया जा सकता है।
- पारंपरिक विधियों की तुलना में टिशू कल्चर पौधों का विकास कम समय और कम कृषि भूमि में किया जा सकता है।
- इस विधि से विशेष रूप से उन पौधों का सफलतापूर्वक प्रवर्धन किया जा सकता है जो अन्य विधियों से कठिन होते हैं।
- टिशू कल्चर तकनीक से केला (Banana) और ग्लेडियोलस (Gladiolus) के नये पौधे बड़े पैमाने (Mass Production) पर सीमित समय में तैयार किए जा सकते हैं।
- इस तकनीक द्वारा उच्च गुणवत्ता वाले पौधे किसानों की जरूरतों के अनुसार उपलब्ध कराए जा सकते हैं।

पादप ऊतक संवर्धन (Plant Tissue Culture) तकनीक का उपयोग कृषि व्यवसाय में किसानों की आय बढ़ाने और कृषि क्षेत्र में उनकी क्षमता को सशक्त बनाने के लिए किया जा रहा है। यह तकनीक युवाओं के लिए स्वरोजगार के नए अवसर और उन्हें कृषि से जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। पादप ऊतक संवर्धन तकनीक के माध्यम से उच्च गुणवत्ता वाले फल, फूल और अन्य पौधों की नर्सरी स्थापित कर अच्छा मुनाफा अर्जित किया जा सकता है।

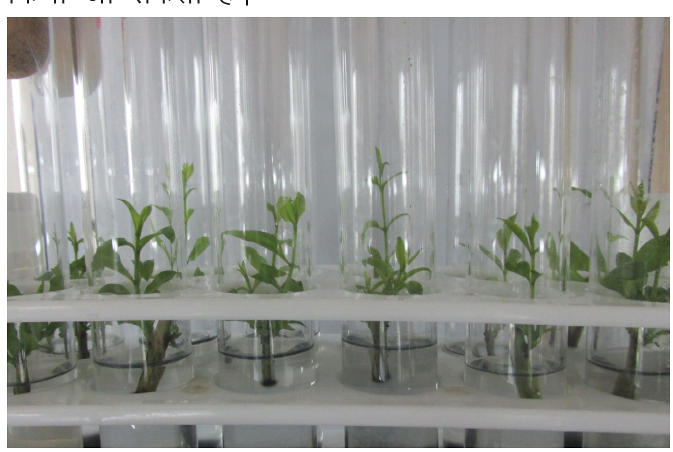

इन विट्रो स्थापन (In Vitro Establishment)

इन विट्रो गुणन
(In vitro multiplication)

टिशू कल्चर प्रोगशाला
(Culture Room)

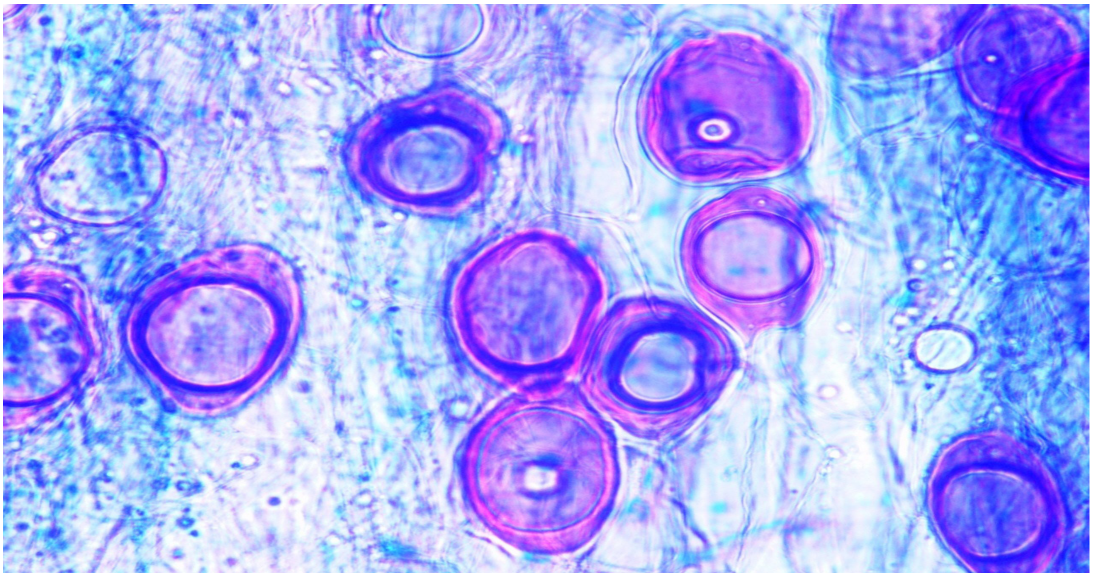

जड़ो के अंदर माइकोराइजा के वेसिकल्स
(Mycorrhiza vesicles in pomegranate root cortex)

अनुकूलन
(Acclimatized Tissue culture of plants)

अर्बुस्कुलर माइकोराइजा कवकः औषधीय पौधों के लिए एक स्वस्थ समाधान

गरिमा सक्सेना एवं सीमा सांगवान
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110 012

औषधीय पौधे मानव जाति के लिए महत्वपूर्ण संसाधन हैं और बीमारियों से लड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये पौधे प्राचीन काल से दस्त, बुखार, सर्दी और मलेरिया जैसी कई बीमारियों के इलाज में उपयोग किए जाने वाले चिकित्सीय यौगिकों का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं। कथित तौर पर, वैश्विक आबादी का 80% प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के लिए औषधीय पौधों पर निर्भर है। हाल के वर्षों में द्वितीयक मेटाबोलाइट्स की बढ़ती व्यावसायिक मांग ने पौधों में द्वितीयक मेटाबोलाइट उत्पादन में सुधार के लिए विभिन्न रणनीतियों को अपनाने को प्रेरित किया है। इंटरनेशनल यूनियन फॉर कंजर्वेशन ऑफ नेचर और वर्ल्ड वाइल्डलाइफ फंड के अनुसार, अनुमान है कि लगभग 80,000 फूलों वाले पौधों की प्रजातियों का उपयोग औषधीय प्रयोजनों के लिए किया जाता है। उनके चिकित्सीय मूल्य को अक्सर द्वितीयक चयापचय से संबंधित सक्रिय यौगिकों की उपस्थिति और समृद्धि के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है, जैसे कि एल्कलॉइड, फ्लेवोनोइड, टरपेनोइड और फेनोलिक्स। क्वेरसेटिन, ल्यूटोलिन और अकासेटिन जैसे औषधीय पौधों के अर्क ने COVID–19 रोगियों की प्रतिरक्षा को बढ़ाने और गंभीर चरण में प्रवेश करने की संभावना को कम करने में महत्वपूर्ण क्षमता दिखाई है। हाल के वर्षों में, औषधीय पौधों की गुणवत्ता में तेज गिरावट का अनुभव हुआ है।

प्रकृति में, पौधे भारी संख्या में लाभकारी सूक्ष्मजीवों (जैसे, एंडोफाइटिक या सहजीवी बैक्टीरिया और कवक) से जुड़े होते हैं जो पौधों के स्वास्थ्य, विकास, उत्पादकता और मेटाबोलाइट संश्लेषण के मॉड्यूलेशन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अर्बुस्कुलर माइकोरिज़ल कवक (एएमएफ) सबसे प्रमुख कवक प्रजातियों में से एक है जो औषधीय पौधों में औषधीय सक्रिय अवयवों के उत्पादन को बढ़ाने के लिए व्यापक रूप से मान्यता प्राप्त है। एएमएफ मिट्टी में पैदा होने वाले कवक हैं जो पौधों के पोषक तत्वों को

ग्रहण करने और सूखा, लवणता, पोषक तत्वों की कमी, अत्यधिक तापमान, भारी धातुओं, कीट और बीमारियों जैसे कई अजैविक तनाव कारकों के प्रतिरोध को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ा सकते हैं। पिछले दशक में, कई अध्ययनों ने औषधीय पौधों में महत्वपूर्ण सक्रिय यौगिकों के उत्पादन और संचय में सुधार पर एएमएफ के सकारात्मक प्रभावों की सूचना दी है।

हाल के एक अध्ययन में, एएमएफ टीकाकरण ने औषधीय सक्रिय अवयवों की सामग्री में 27% की उल्लेखनीय वृद्धि की, जिसमें फ्लेवोनोइड्स (68%) और टरपेनोइड्स (53%) में विशेष रूप से उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई। इसके अलावा, जमीन के नीचे के अंगों (32%) में औषधीय सक्रिय तत्वों की ए.एम.एफ. के प्रति प्रतिक्रिया जमीन के ऊपर के अंगों (18%) की तुलना में अधिक स्पष्ट थी। ए.एम.एफ. पौधों की चयापचय गतिविधि और घुलनशील शर्करा, पॉलीसेकेराइड, फ्लेवोनोइड और एल्कलॉइड सहित रासायनिक यौगिकों को विनियमित करके पौधों की गुणवत्ता के गुणों को बढ़ाता है। हाल के अध्ययनों से पता चला है कि ए.एम.एफ. औषधीय

पौधों के बीज के अंकुरण, विकास और माध्यमिक चयापचय गतिविधि को बढ़ावा दे सकता है और फिनोल फ्लेवोनोइड, क्विनोन और अन्य औषधीय सक्रिय अवयवों को बढ़ा सकता है। औषधीय सक्रिय अवयवों पर इसके सकारात्मक प्रभाव के कारण एएमएफ ने बहुत ध्यान आकर्षित किया है, और यह जड़ की सरंचना को प्रभावित कर सकता है। कुल लंबाई, अनुमानित क्षेत्र, सतह क्षेत्र और मात्रा जैसे लक्षण उच्च एएमएफ टीकाकरण सांद्रता के तहत अधिक महत्वपूर्ण रूप से बढ़ते हैं।

कुछ अध्ययनों में, ए.एम.एफ. टीकाकरण ने ग्लाइसीराइजा यूरालेंसिस के विभिन्न भूमिगत अंगों में औषधीय सक्रिय घटक सामग्री में काफी वृद्धि की है, जबकि रिपोर्ट में पुष्टि की गई है कि ए.एम.एफ. उपनिवेशीकरण ने गैर–ए.एम.एफ. उपनिवेशण वाले औषधीय पौधों की तुलना में, कैथरैन्थस रोजस (सदाबहार) के उपरोक्त भूमिगत अंगों में औषधीय सक्रिय तत्वों को काफी प्रभावित किया है।

तुलसी

ओसीमम टेनुइफ्लोरम एल. (तुलसी) *लैमियासी* परिवार से संबंधित एक बारहमासी झाड़ी है, जो अपने औषधीय गुणों के लिए अत्यधिक मूल्यवान है। तुलसी एक प्राकृतिक सिरदर्द निवारक है और सामान्य सर्दी, फ्लू, बुखार, अस्थमा, तनाव, मधुमेह, हृदय रोग, मलेरिया, यकृत रोग, दस्त आदि के इलाज के लिए फायदेमंद है। विभिन्न औद्योगिक क्षेत्रों में तुलसी और इसके उत्पादों की बढ़ती रुचि और मांग क्षेत्रों को बढ़ी हुई जड़ी–बूटी और आवश्यक तेल की उपज वाले पौधों की खेती के लिए उपयुक्त सस्य प्रथाओं की आवश्यकता होती है। इसके विशाल औषधीय मूल्यों को देखते हुए, तुलसी के कई व्यावसायिक उत्पाद जैसे आवश्यक तेल (ईओ), सूखे पत्ते और हर्बल पाउडर उपलब्ध हैं। अध्ययनों के अनुसार, अर्बुस्कुलर माइकोराइजा कवक तुलसी में आवश्यक तेल की सांद्रता को बढ़ाता है। यह यूजेनॉल, β–इलेमिन और β–कैरियोफिलीन की सांद्रता को बढ़ाता है जो आवश्यक तेल के प्रमुख घटक हैं। सुगंधित और औषधीय पौधों की वृद्धि और उपज में सुधार के कारण ए.एम. कवक की भूमिका को तेजी से महसूस किया गया है। जड़ी–बूटियों की उपज और सुगंधित पौधों की ईओ सांद्रता पर एएमएफ के सकारात्मक प्रभाव पर कई अध्ययन हुए हैं। वे व्यक्तिगत घटकों की संख्या और सापेक्ष एकाग्रता को भी प्रभावित करते हैं, जो मिलकर ईओ की चिकित्सीय और जैविक गतिविधि में भिन्नता पैदा कर सकते हैं। ए.एम.एफ. टीका पत्तियों में फ्लेवोनोइड्स और फिनोल की सांद्रता को बढ़ाकर तुलसी के पौधे की एंटीऑक्सीडेंट गतिविधि को बढ़ाता है।

अश्वगंधा

अश्वगंधा सुप्रसिद्ध औषधीय पौधों की प्रजाति है। यह सबसे अधिक गहराई से अध्ययन की गई आयुर्वेदिक औषधियों में से एक है। कायाकल्प और दीर्घायु बढ़ाने के अलावा, इसमें इम्यूनोमॉड्यूलेशन, कैंसर–विरोधी, तनाव–विरोधी और न्यूरोप्रोटेक्शन जैसे कई अन्य गुण हैं। घरेलू और अंतरराष्ट्रीय दोनों बाजारों में इसकी भारी मांग के कारण भारत के राष्ट्रीय औषधीय पादप बोर्ड के अनुसार यह शीर्ष बत्तीस प्रमुख औषधीय पौधों में से एक है। अश्वगंधा और संबंधित ए.एम.एफ. पर कई अध्ययन मुख्य रूप से वनस्पति विकास, बायोमास उत्पादन को बढ़ावा देने और मिट्टी में पोषक तत्वों के अवशोषण में वृद्धि की सुविधा में ए.एम.एफ. की प्रभावशीलता से संबंधित रहे हैं। अश्वगंधा की जड़ों के प्रमुख जैव रासायनिक घटक विथेनोलाइड्स हैं जो अपने औषधीय गुणों के लिए जाने जाते हैं और कई अध्ययनों में एएम कवक के टीकाकरण पर अश्वगंधा के जैव रासायनिक घटकों में वृद्धि देखी गई है। ए.एम.एफ. ने अश्वगंधा में विथाफेरिन–ए की सांद्रता को 11.5 से 43.5% तक बढ़ा दिया, जिसमें कैंसर के इलाज के लिए चिकित्सीय एजेंट के रूप में क्षमता है। *विथानिया सोम्निफेरा* की मिट्टी से विभिन्न एएम बीजाणु विविधता का दस्तावेजीकरण किया गया है जैसे कि *ग्लोमस मैक्रोकार्पम, ग्लोमस इंट्राराडाइसेस, ग्लोमस मल्टीकौले, गिगास्पोरा एल्बिड, ग्लोमस बैडियम, एकाउलोस्पोरा सोलोइडिया, एकाउलोस्पोरा गेर्डेमैनी, एकाउलोस्पोरा बिरिटिकुलाटा* और *एकाउलोस्पोरा मायरियोकार्पा*।

मुलेठी (लिकोरिस)

मुलेठी (*ग्लाइसीराइज़ा ग्लबरा*) हर्बल दवाओं में व्यापक उपयोग के लिए प्रसिद्ध है। यह खांसी, अस्थमा और गले में खराश के लिए एक पारंपरिक उपचार है। इसकी जड़ को पाचन समस्याओं, रजोनिवृत्ति के लक्षणों, बैक्टीरिया और वायरल संक्रमण जैसी स्थितियों के लिए आहार

अनुपूरक के रूप में प्रचारित किया जाता है। *लीकोरिस* ने *क्लाराइडियोग्लोमस एटुनिकाटम इनोक्यूलेशन* के साथ अधिकतम माध्यमिक मेटाबोलाइट्स का उत्पादन दिखाया। हाल के एक अध्ययन में एएमएफ ने जड़ों में ग्लाइसीरिज़िक एसिड को बढ़ाया, जो कि लिकोरिस का एक प्रमुख यौगिक है, जो बिना टीकाकरण वाले पौधों की तुलना में 1.51–3.92% अधिक है। हाल ही में, एक बहुक्रियाशील दवा वाहक के रूप में ग्लाइसीरिज़िक एसिड की भूमिका का प्रदर्शन किया गया। लिकोरिस में एएमएफ के साथ सहजीवन विकास को बढ़ावा देता है, मेटाबोलाइट उत्पादन बढ़ाता है, और प्रत्यारोपण के दौरान अनुकूलन अवधि को छोटा करता है। ग्लैब्रिडिन, जिसे लिकोरिस की जड़ से अलग किया गया है, ने टायरोसिनेस निषेध प्रदर्शित किया है और इसलिए सौंदर्य प्रसाधन उद्योग में इसका व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। कुछ रिपोर्टों ने ग्लैब्रिडिन वृद्धि में एएमएफ की महत्वपूर्ण भूमिका का सुझाव दिया है।

निष्कर्ष

एएमएफ पौधों की जड़ों में द्वितीयक मेटाबोलाइट सांद्रता में सुधार करता है और द्वितीयक मेटाबोलाइट्स की

बढ़ी हुई सांद्रता के उत्पादन के लिए मेजबान और ए.एम.एफ. के बीच अनुकूलता आवश्यक है। कुछ शोधकर्ताओं ने अश्वगंधा और लिकोरिस और अन्य सजावटी फूल वाले पौधों की प्रजातियों में एएमएफ टीकाकरण के बाद सकारात्मक विकास प्रभाव देखा है। ए.एम.एफ. सहजीवन मेजबान जीन अभिव्यक्ति और मेटाबॉलिक प्रोफाइल को प्रभावित करता है और यह ए.एम.एफ. टीका लगाए गए पौधों में माध्यमिक मेटाबोलाइट्स की सांद्रता में प्रभावी वृद्धि का कारण हो सकता है। ए.एम.एफ. सहजीवन के दौरान माध्यमिक मेटाबोलाइट एकाग्रता में वृद्धि या तो एक रक्षा प्रतिक्रिया के रूप में हो सकती है या मैक्रो और सूक्ष्म पोषक तत्वों में सुधार हो सकती है। यह देखा गया है कि सहजीवन के प्रारंभिक चरण के दौरान, रक्षा–संबंधी मेटाबोलाइट्स के उत्पादन में वृद्धि होती है, जिसे बाद में सहजीवन के बाद के चरणों में दबा दिया जाता है। ए.एम.एफ. संघों ने बायोसिंथेटिक मार्गों के लिए आवश्यक सब्सट्रेट्स के संचय को बढ़ाया जा सकता है। उदाहरण के लिए, अश्वगंधा में पहले की रिपोर्टों में नाइट्रोजनयुक्त उर्वरक और द्वितीयक मेटाबोलाइट जैवसंश्लेषण के बीच संबंध का संकेत दिया गया है, जिसने विथेनोलाइड संश्लेषण (जहां नाइट्रोजन एक आवश्यक घटक है) के लिए अग्रणी जैवसंश्लेषण मार्ग में आवश्यक स्टेरोल सांद्रता को बढ़ाने में योगदान दिया है। चयापचय मार्गों को विनियमित करने के लिए ए.एम.एफ. और पौधों की प्रजातियों की क्षमता को समझने के लिए व्यापक शोध आवश्यक है। बीमारी और उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग सहित अनुचित प्रथाओं के सामने कृषि की बड़ी चुनौतियों को पौधों के बायोमास में वृद्धि और वाणिज्यिक मूल्य के माध्यमिक चयापचयों के समृद्ध स्रोतों के प्रावधान के माध्यम से ए.एम.एफ.–मेजबान संघों के इष्टतम संयोजन के उपयोग के माध्यम से सुधारा जाएगा। इसके अलावा, सीधे ए.एम.एफ. बायोफॉर्म्यूलेशन प्रदान करके सटीक खेती का लक्ष्य माध्यमिक चयापचयों के उत्पादन में वृद्धि के लिए पौधों की प्रजातियों की खेती के लिए एक उपन्यास जैव प्रौद्योगिकी हस्तक्षेप के रूप में काम करेगा।

श्रीअन्न एवं जैविक खेती में खरपतवार प्रबंधन

डॉ. टीकम सिंह
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110 012

श्री अन्न छोटे बीज वाली वार्षिक घासों का समूह है जो मुख्य रूप से समशीतोष्ण, उपोष्णकटिबंधीय और उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों के शुष्क क्षेत्रों में सीमांत भूमि पर अनाज और चारे की फसलों के रूप में उगाए जाते हैं। सरकार ने इन मोटे अनाजों का नाम बदलकर "न्यूट्री अनाज" और अब "श्री अन्न" कर दिया है। ये पोषक तत्वों का पावरहाउस हैं। स्वास्थ्य लाभ, जलवायु लचीलापन और पर्यावरण सुरक्षा जैसे किसी भी पहलू में वे चावल और गेहूं से कमतर नहीं हैं। श्री अन्न देश की खाद्य और पोषण सुरक्षा में महत्वपूर्ण योगदान देने की काफी क्षमता रखता है।

श्री अन्न प्राचीन खाद्यान्न पौधे हैं जिनके पश्चिम अफ्रीका में 4000 ईसा पूर्व और सिंधु सभ्यता में 3000 ईसा पूर्व के सबसे पुराने साक्ष्य मिले हैं। भारत में कई स्थानों पर कुटकी, कंगनी और कोदो के सबसे पुराने साक्ष्य मिले हैं। जलवायु के अनुकूल श्री अन्न 130 से अधिक देशों में उगाया जाता है। श्री अन्न एशिया में 600 मिलियन लोगों का पारंपरिक भोजन है। भारत के दो श्री अन्न बाजरा और ज्वार मिलकर विश्व उत्पादन में लगभग 20 प्रतिशत का योगदान देते हैं। भारत बाजरा के उत्पादन में विश्व में 40. 51 प्रतिशत है, इसके बाद ज्वार का 8.09 प्रतिशत है। भारत में प्रमुख बाजरा उत्पादक राज्य राज, कर्नाटक, महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, गुजरात, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु और उत्तराखंड हैं और 2020–21 की अवधि के दौरान भारत में बाजरा उत्पादन में इनका योगदान 98% रहा है। भारत के कुल बाजरा उत्पादन में राजस्थान का योगदान 28.61 प्रतिशत है।

श्रीअन्न (मिलेट्स) की फसलों को दो समूहों में बांटा गया है जिसमें एक श्रेणी में मुख्य फसलें बाजरा तथा ज्वार आती हैं और दूसरी श्रेणी में छोटी मिलेट की फसलें जैसे कि रागी (*फिंगर मिलेट*), काकुम (*फॉक्सटेल मिलेट*), सावा (*बार्नयार्ड मिलेट*), कोदो (*कोदो मिलेट*), कुटकी (*लिटिल मिलेट*) तथा चेना (*प्रोसो मिलेट*) आती हैं। इनके इलावा टेफ, फोनियो और ब्राउन टॉप मिलेट भी छोटी मिलेट की श्रेणी में आती हैं। भारत में श्रीअन्न की फसलें 14 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र से करीब 18 मिलियन टन पौष्टिक अनाज का उत्पादन होता है। छोटी अवधि की फसलें होने के साथ साथ शुष्क तथा बारानी क्षेत्रों में यह फसलें अच्छी उपज देती हैं। कृषि के लिए प्रतिकूल परिस्तिथियाँ जैसे कि बंजर या कम उपजाऊ मिट्टी, अधिक तापमान, सूखे की समस्या तथा कृषि के लिए सीमित संसाधनों की कमी के कारण जहाँ दूसरी अनाज की फसलों की खेती कर पाना मुश्किल होता है उन क्षेत्रों में छोटी मिलेट फसलें खाद्यान्न सुरक्षा का एक मुख्य स्रोत हैं। प्रतिकूल वातावरण में भी ये फसलें अच्छी खाद्य एवं चारे की उपज देती हैं।

पोषण से भरपूर श्रीअन्न

श्रीअन्न फसलें अन्य खाद्य फसलों के मुकाबले अधिक पोषण युक्त हैं। इनका अनाज ग्लूटेन–रहित होता है तथा इसमें प्रचुर मात्रा में फाइबर तथा कम गलाईसेमिक इंडेक्स होता है जो की इसे एक पोषक तत्वों से युक्त आहार बनाता है। इनमें औसतन कार्बोहायड्रेट की मात्रा 57–73 ग्रा./100 ग्रा. तथा औसतन प्रोटीन की मात्रा 10–11% होती है। इनका अनाज फाइबर से युक्त होता है जो कि चावल एवं गेहूं के मुकाबले 785% अधिक है। इनमें सूक्ष्म–पोषक तत्वों की मात्रा भी भरपूर है, जिनमें मिनरल की मात्रा 1.7–4.3 ग्रा./100 ग्रा. है जो की गेहूं (1.4%) तथा चावल (1.6%) की तुलना में अधिक है। ये सभी तत्व शरीर की इम्युनिटी बढाने में सहायक हैं। इसके साथ–साथ ये बीटा–कैरोटीन और बी–विटामिन खासतौर पर राइबोफ्लेविन, नियासिन और फोलिक एसिड का भी अच्छा स्रोत है। इनमें पाए जाने वाले फिनॉल में कई गंभीर बीमारियों को रोकने वाले रसायन हैं तथा फेनोलिक रसायन मधुमेह में लाभदायक है।

मुख्य श्रीअन्न (बाजरा, ज्वार, रागी)

गौण श्रीअन्न (कंगनी, सवां, कुटकी, कोदो)

उन्नत सस्य प्रौद्योगिकियाँ

मेंड़ पर बुवाई

मेड़ पर बुवाई विधि में अतिरिक्त पानी को खेत से निकालने में मदद करती है, जिससे पौधों पर अतिरिक्त नमी का दबाव कम हो जाता है। यह शुष्क परिस्थितियों के लिए भी अच्छा है क्योंकि यह मेड़ों में उपलब्ध सीमित पानी का संरक्षण करता है और पौधों पर गर्मी के दबाव को कम करता है। मेड़ पर बुवाई करने से फसल उपज, आर्थिक लाभ एवं संसाधन उपयोग दक्षता में वृद्धि होती है, तथा खरपतवारों की समस्या कम होती है।

शून्य जुताई एवं फसल अवशेष पलवार

बाजरे की खेती शून्य जुताई विधि द्वारा भी सफलतापूर्वक की जा सकती है। इसके लिए खेत को समतल करना व मृदा पर पूर्व फसल के अवशेषों या अन्य वानस्पतिक अवशेषों का आवरण बनाए रखना लाभप्रद होता है। शून्य जुताई फसल अवशेष सहित अपनाने से उपरी मृदा सतह (0–5 सें.मी.) में मृदा कार्बन की मात्रा में सार्थक वृद्धि होती है।

जैविक प्रबंधन

जैविक खेती के लिए श्रीअन्न सबसे उपयुक्त फसलें होती हैं क्योंकि श्री अन्न सबसे कम उपजाऊ मिट्टी में उगते हैं, कृत्रिम उर्वरकों की मांग नहीं करते हैं, अधिकतर कीट मुक्त होते हैं, श्री अन्न फसल प्रणाली में उपयुक्त हैं, कई प्रतिभूतियों का उत्पादन करते हैं, तथा जलवायु अनुकूल फसल के कारण श्री अन्न भविष्य की मुख्य खाद्य फसलें होने वाली हैं। इन विशेषताओं के कारण श्रीअन्न फसलें आसानी से जैविक खेती के रूप में उगाई जा सकती हैं। केवल बाजरा एवं ज्वार की फसल की पोषक तत्वों की आवश्यकता अधिक होती है जिनमें 10–15 टन अच्छी सड़ी गली खाद बुवाई से पूर्व खेत में मिलाकर बुवाई करने से इनमें पोषक तत्व प्रबंधन हो जाता है जबकि गौण श्रीअन्न फसलों में तो 5–7 टन अच्छी सड़ी गली खाद ही पर्याप्त होती है। जैविक खेती में पोषक तत्व प्रबंधन के लिए किसानों को निम्नलिखित तथ्यों पर ध्यान देना चाहिए।

- फसल चक्र में दलहन और हरी खाद वाली फसलों को शामिल करें।
- कटाव, निक्षालन या वाष्पीकरण से पोषक तत्वों की हानि को कम किया जाना चाहिए।
- मिट्टी का पीएच मान सही बनाये रखना चाहिए।
- कुछ प्राकृतिक खनिज उर्वरकों (जिप्सम, रॉक फॉस्फेट) का उपयोग किया जा सकता है।

- कम्पोस्ट, वर्मीकम्पोस्ट, केंचुआ खाद का प्रयोग लाभकारी है।
- फसल अवशेषों का उपयोग।
- जैव–उर्वरकों का उपयोग (राइजोबियम, एज़ोस्पिरिलम, एज़ोटोबैक्टर, एज़ोटोमोनास, माइकोराइजा, पीएसबी, चावल में नीले–हरे शैवाल, आदि)।

यदि कीटों की समस्या आये तो 5 प्रतिशत नीम का छिड़काव लगभग सभी कीटों की रोकथाम करने में सहायक होता है।

जैविक खेती में खरपतवार प्रबंधन

जैविक खेती में खरपतवार प्रबंधन के चार सिद्धांत होते हैं जिनमें मिट्टी, फसल और फसल प्रणालियों का ज्ञान, खरपतवार प्रजातियों का ज्ञान और वे मिट्टी, फसल और फसल प्रणालियों को कैसे प्रभावित कर सकते हैं, खरपतवारों के लिए उपलब्ध प्रबंधन विकल्पों का ज्ञान और उचित उपयोग, खरपतवार प्रजातियों और मिट्टी या फसल प्रबंधन के प्रभाव की निगरानी करना मुख्य हैं। खरपतवार पानी, पोषक तत्व, हवा और प्रकाश के लिए मुख्य फसल से प्रतिस्पर्धा करते हैं। वे मिट्टी से बहुत सारे पोषक तत्व निकाल लेते हैं। वे विभिन्न कीट–पतंगों और रोग पैदा करने वाले सूक्ष्मजीवों के लिए वैकल्पिक मेजबान पौधे भी होते हैं। इसलिए, जैविक प्रणालियों में मिट्टी की उर्वरता और मिट्टी की उत्पादकता को बनाए रखने के लिए खरपतवार नियंत्रण बहुत आवश्यक है। जैविक खेती में रासायनिक शाकनाशियों की अनुमति नहीं होती है इसलिए, जुताई जैसे यांत्रिक या सस्य तरीकों को सिंचाई के समय, बीज बोने की दर और किस्म के चयन, खरपतवार मुक्त बीजों का उपयोग, फसल प्रणाली, जानवरों का उपयोग, बाढ़, मल्चिंग, खाद बनाना, निराई करना, हाथ से निराई करना, किसानों की देखभाल और भूसे के निपटान के साथ जोड़ा जाता है, आदि को खरपतवार प्रबंधन के लिए अपनाया जा सकता है। इस उद्देश्य के लिए विभिन्न खरपतवारों पर परजीवीकरण करने वाले कई कवक और जीवाणु रोगजनकों का उपयोग किया जा सकता है। यदि जैविक खाद जैसे कि FYM या कम्पोस्ट का उपयोग किया जाता है, तो उसमें कोई व्यवहार्य खरपतवार के बीज नहीं होने चाहिए।

सारांश

श्रीअन्न के लचीलापन एवं अनुकूलनशीलता के साथ जैविक कृषि प्रणालियों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। न्यूनतम लागत के साथ सीमांत मृदा में पैदावार देने की क्षमता इन्हें स्थायी कृषि के लिए आदर्श बनाती है। जैविक कृषि में सस्य, यान्त्रिक एवं जैविक खरपतवार नियंत्रण विधियों के एकीकृत करके खरपतवारों के दबाव को काफी कम किया जा सकता है। कुल मिलाकर रणनीतिक एवं पर्यावरण के अनुकूल खरपतवार प्रबंधन विधियों के साथ श्रीअन्न के अंतर्निहित लाभों का संयोजन जैविक खेती में अधिक उत्पादकता, जैव विविधता एवं दीर्घकालिक स्थिरता सुनिश्चित करता है।

लेखकों से...

1. अपने तकनीकी एवं लोकप्रिय लेख हिन्दी में टाइप करवाकर भेजें।
2. रचना पृष्ठ के एक ओर उचित हाशिया और पंक्तियों के बीच स्थान छोड़कर सम्पादक, प्रसार दूत के पास यथा समय भेजें।
3. तकनीकी पर दी गई जानकारी की पूरी जिम्मेदारी लेखक की होगी। रचना को प्रकाशित करने या न करने का पूरा अधिकार सम्पादक मंडल को होगा।

प्रसार दूत का प्रकाशन समय

वार्षिक शुल्क 150/- मनीऑर्डर द्वारा भेजें।

शुल्क और सामग्री भेजने एवं पत्रिका मंगवाने का पता

प्रभारी अधिकारी

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

फोन: 011-25841670, 25846233, 25841039, 25803600

पूसा एग्रीकॉम: 1800 11 8989 (नि:शुल्क)

ई-मेल: incharge_atic@iari.res.in

पाठकों से...

प्रसार दूत में प्रकाशित किसी भी तकनीकी के विषय में अंश और समाधान हेतु आपके पत्रों का स्वागत है। विषयों पर अधिक जानकारी के लिए लेखक से सीधे भी सम्पर्क कर सकते हैं।

किसानों से...

यदि आपकी खेती व पशु-पालन संबंधी कोई विशेष समस्या है, तो लिखकर भेजें। हम प्रसार दूत के माध्यम से उसका समाधान आप तक पहुंचाएंगे।

अन्त में ...

आपकी खुशहाली ही हमारी सफलता है।

निदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012 द्वारा प्रकाशित तथा
मैसर्स एम एस प्रिंटर्स, सी-108/1 बैक साइड नारायणा इंडस्ट्रीयल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110028, द्वारा मुद्रित
फोन: 7838075335, 9899355565, 9899355405,